५० वर्षों से प्रकाशित

कौल-कल्पतरु

चण्डी

साधन-माला

श्री शिव-कवच
श्रीकार्तवीर्यार्जुन
दर्पण-प्रयोग
एवं
अनुभूत मन्त्र-प्रयोग

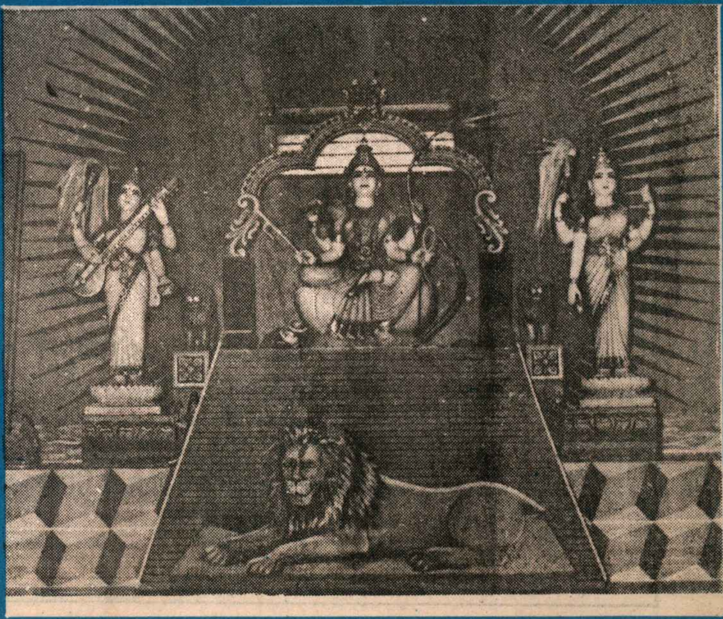

'[illegible]-पीठ' की 'श्रीललिताम्बा महा-राज्ञी'

गर्भ - पात निवारण
एवं
गर्भ - धारण- यन्त्र

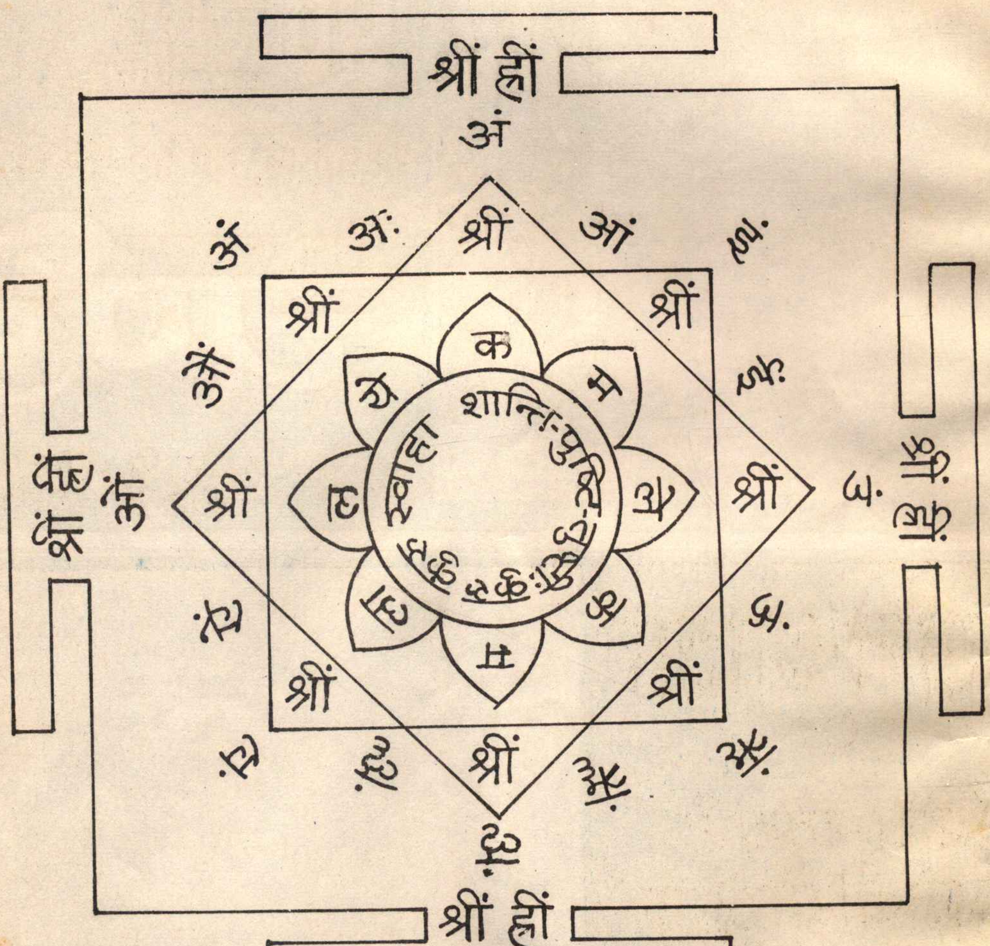

अष्ट - गन्ध से लिखकर धारण करें।

मानद सम्पादक
श्री रमादत्त शुक्ल

सम्पादक
श्री ऋतशील शर्मा

पता
चण्डी कार्यालय,
अलोपीबाग मार्ग,
प्रयाग–२११००६
(उ० प्र०)

दूर-भाष
६०६७८३

शुल्क भारत में
एक प्रति : रु० ५

वार्षिक शुल्क : रु० ५५
आजीवन शुल्क : रु० ५५०

शुल्क विदेश में
हवाई डाक/समुद्री डाक

वार्षिक : रु० ५००/३००
आजीवन : ५०००/३०००

शुल्क मनीआर्डर या ड्राफ्ट कौल-कल्पतरु चण्डी के नाम से चण्डी कार्यालय, इलाहाबाद के पते पर भेजें।

मुद्रक
परा वाणी प्रेस
अलोपीबाग मार्ग,
प्रयाग–२११००६

हिन्दू - धर्म के ज्ञान - मय क्रिया-पक्ष
की
'राष्ट्र-भाषा' में शोध-पूर्ण प्रस्तुति

कौल-कल्पतरु चण्डी

वर्ष ५१ अङ्क ३
'पार्थिव' सम्वत्, ज्येष्ठ, २०४९ वि० जून, १९९२

इस अंक म

- श्रीराम गीता ... ६६
- ब्रह्म और माया ... ६७
- सदुपदेश-सुधा–'पवित्र आत्मा' ... ६८
- महा-मन्त्र 'गायत्री' ... ६९
- भारत का आदर्श ... ७०
- स्वर-योग ... ७१
- 'श्रीछाया-पीठ' का महोत्सव ... ७३
- मध्य प्रदेश का 'श्रीज्वाला देवी मन्दिर' ... ७५
- 'श्रीपीताम्बरा-पीठ' का चिकित्सालय ... ७६
- श्रीदुर्गा-पाठ की महिमा ... ७८
- **साधन-माला** ... ८१-९६

श्री राम-गीता

(गताङ्क का शेष)

श्रवण मनन निध्यासन[1] द्वारा। कर्म ते करिए स्वरूप विचारा
परमात्मासन अपने कांहीं। आन अभेद अभिन्न सदाहीं
पञ्च-कोश महँ[2] जब जेहि संगा। रहत आत्म भासत तेहि रङ्गा
यथा जपा-पुष्पादि[3] प्रसङ्गा। विमल फटिक दरशत बहुरङ्गा
जैसे लोह अग्नि में रहई। तजि निज धर्म अनल-गुन गहई
तस मन आत्म निकट करि वासा। निज जड़त्व आतम महँ भासा
भो अध्यास[4] भाव तेहि हेता। आत्म एक-रस परम सचेता
शुद्ध सच्चिदानन्द-घन जोई। सर्वातमा अहं हम सोई
करब अभेद-भावना जबहीं। होइहि ब्रह्म जीव यक तबहीं

१ निदिध्यासन = ध्यान। २ पञ्च-कोश = १ अन्न-मय, २ प्राण-मय, ३ मनो-मय ४ विज्ञान-मय, ५ आनन्द-मय। ३ जपा-पुष्पादि = दुपहरिया के फूल। ४ अध्यास = भ्रम।

स-म्म-ति-याँ

श्री भैरवानन्दनाथ, १०८ चकरा घाट, सागर (म० प्र०)/१-७-१९९२

"...'चण्डी' अङ्क १ (अप्रैल, ९२), अङ्क २ (मई, ९२) में प्रकाशित **'साधन-माला'** के दोनों अङ्क देखे। सभी सामग्री अति उत्तम है। पाठक-वर्ग का अवश्य ही भला होगा। आप इसी प्रकार साधकों को प्रेरणा देते रहें—यही कामना है।

'कौल-विलास' सभी के लिए पठनीय है। पश्वाचार-परक साधनाओं को सर्वोच्च माननेवालों को इसका अध्ययन अवश्य करना चाहिए, ताकि उन्हें अपनी स्थिति को जानने में सहायता मिले।..."

पं० कपिलनारायण मिश्र, आरा, भोजपुर (बिहार) ३०-६-१९९२

"...**'साधन-माला'** स्तम्भ की योजना एक अच्छी प्रक्रिया है। इसके अन्तर्गत जो भी **'प्रयोग'** प्रकाशित किए जाएँ, वह पूर्ण-रूप से स-विधि होने चाहिए। 'प्रयोग' के लेखक/प्रस्तुत-कर्त्ता का नाम/पता भी प्रकाशित होना चाहिए, जिससे पाठक-बन्धु शङ्काओं के समाधान हेतु सीधे सम्पर्क स्थापित कर सकें। **'कौल-विलास'** और **'शक्ति-तत्त्व'** पुस्तक-रूप में विशेष रूप से संग्रहणीय हो गए हैं।..."

पं० गोरखनाथ तिवारी, उप-डाकपाल, वाराणसी (उ० प्र०)/१-७-१९९२

"...आप द्वारा प्रेषित 'चण्डी' अप्रैल, मई अङ्क देखे। नवीन **'साधन-माला'** स्तम्भ अत्यन्त उत्कृष्ट है। प्रशंसा हेतु शब्द नहीं हैं।..."

ब्रह्म और माया

* स्वामी श्री दिव्यानन्द जी सरस्वती

शिष्य—हे गुरु-देव ! कृपाकर मुझे बतलाइए कि 'ब्रह्म' का क्या स्वरूप है ?

गुरु—'ब्रह्म' शुद्ध 'सत्-चित्-आनन्द'—स्वरूप है। सर्व-व्यापी तत्त्व है।

शिष्य—उसका रूप-रङ्ग कैसा है ? क्या हम उसे देख सकते हैं ?

गुरु—'ब्रह्म' का कोई नाम, रूप व रङ्ग नहीं है। वह चिति या प्रकाश - रूप एक सर्व - व्यापी तत्त्व है। वह अपने स्वरूप से ज्यों-का-त्यों सर्वत्र अधिष्ठान-रूप से विद्यमान है। वह अकर्त्ता, अभोक्ता, निरञ्जन, निराकार व निष्कल है। वह इन स्थूल नेत्रों द्वारा नहीं देखा जा सकता। वह ज्ञान-चक्षु द्वारा ही अनुभव-गम्य है।

शिष्य—'ब्रह्म' जब अकर्त्ता है, तो फिर इस दृश्य संसार की रचना कोन करता है ?

गुरु—संसार की रचना, लय आदि तो 'माया' का कार्य है, 'ब्रह्म' का नहीं।

शिष्य—यह 'माया' कहाँ से आई और उसका क्या स्वरूप है ? क्या वह 'ब्रह्म' से भिन्न है ?

गुरु—'माया', 'ब्रह्म' की ही 'शक्ति' है। 'ब्रह्म' में जब यह सङ्कल्प उत्पन्न होता है कि मैं एक हूँ, अनेक हो जाऊँ। तब तत्क्षण वह अपनी 'योग-माया' को प्रकट करता है और वही 'योग - माया' फिर संसार की सृष्टि, स्थिति, लय आदि कार्य करती है। इसी 'ब्रह्म-शक्ति' को फिर 'स-गुण ब्रह्म'—नाम देकर कोई 'माया', कोई 'शक्ति', कोई 'प्रकृति' कहते हैं।

शिष्य—कहते हैं कि 'माया' मिथ्या है। जो कुछ भी नहीं है, वह 'माया' है। जब 'माया' स्वयं कुछ भी नहीं है, तो वह सब कुछ करने में समर्थ कैसे हो सकती है ? इधर तो आप कहते हैं कि 'ब्रह्म' अकर्त्ता है, वह कुछ नहीं करता और उधर हम यह कहें कि 'माया' भी मिथ्या है, वह भी कुछ नहीं कर सकती, तो फिर इस दृश्य प्रपञ्च—संसार का वास्तविक कर्त्ता कौन है ? यह भी सम्भव नहीं कि यह संसार अपने आप ही हो गया हो, इसका कोई तो कारण होना चाहिए क्योंकि कारण बिना कार्य सम्भव नहीं होता। कृपया मेरी इस शङ्का का निवारण कीजिए।

गुरु—'ब्रह्म-तत्त्व' या परम-तत्त्व, शुद्ध चैतन्य-स्वरूप है। वह सर्वत्र व्याप्त और सभी प्रकार की मर्यादाओं से शून्य है। इसमें अनन्त शक्तियाँ हैं तथा यह पूर्ण स्वातन्त्र्य - समन्वित है। इसकी शक्तियाँ इससे सर्वथा अभिन्न हैं। सृष्टि से पूर्व वे उसमें अव्यक्त रूप से लीन रहती हैं तथा 'सर्ग' - काल उपस्थित होने पर, अपनी सङ्कल्प-शक्ति से वह शुद्ध चिति ही, दर्पण में प्रतिबिम्ब के समान, इस दृश्य प्रपञ्च को अपने में आभासित करती है। यद्यपि आकारात्मक 'देश' और क्रियात्मक 'काल' का आभास इस 'चिति'-शक्ति में ही होता है, तथापि इनका आधार होने के कारण वह किसी भी प्रकार इनसे प्रभावित नहीं होती, जिस प्रकार दर्पण अपने में प्रतिबिम्बित स्वत्त्वाभासों से सर्वथा असङ्ग ही रहता है। इस शुद्ध चिति के द्वारा ही संसार की उत्पत्ति-लयादि होते हैं।

संसार का चाकचिक्य सभी प्राणियों को चकाचौंध कर डालता है, इसमें सन्देह नहीं, किन्तु यह सत्य है कि इस जगज्जाल में रह कर भी जो इसके तत्त्व को समझ जाता है, वही इस 'भव-सागर' को

सदुपदेश-सुधा

पवित्र आतमा

सुख देवे, दुःख हरे, दूर करे अपराध । कहे कबीर कब मिले, परम सनेही साध ।।

जो व्यक्ति 'पवित्र' है, उस पर कोई विजय प्राप्त नहीं कर सकता । कोई शत्रु उसको न तो हरा सकता है और न सता सकता है । उसकी रक्षा, ईमानदारी और 'पवित्रता' के द्वारा होती है । उसको और किसी रक्षक की आवश्यकता नहीं । जिस प्रकार यह असम्भव है कि पाप 'पुण्य' पर अधिकार जमा सके, उसी प्रकार अपवित्र मनुष्य—'पवित्र मनुष्य' पर कभी अधिकार नहीं जमा सकता । मिथ्या दोषारोपण, घृणा, द्वेष न तो 'पवित्रता' के पास पहुँच सकते हैं, न उसका कुछ बिगाड़ ही सकते हैं ।

'पवित्र मनुष्य' कोई ऐसा काम नहीं करता, जिससे उसको दूसरों से दबना पड़े । वह जो काम कर सकता है, उसे दृढ़ता-पूर्वक करता है और जो बात कहता है, वह खरी कहता है । वह किसी के आगे नहीं झिझकता । जो मनुष्य किसी का अनिष्ट नहीं करता, वह किसी से क्यों-कर डर सकता है ? जो मनुष्य किसी को धोखा नहीं देता, वह किसी के सामने क्यों-कर लज्जित हो सकता है ? 'पवित्र मनुष्य' अपने सब काम ईमानदारी और परिश्रम के साथ करता है और पाप से कोसों दूर रहता है । इसलिए उसे कोई किसी बात में दबा नहीं सकता । जिसने 'पवित्रता' के द्वारा शत्रुओं को मार डाला है, उसे न तो कोई बाह्य शत्रु पराजित कर सकता है और न उसे बाह्य शत्रुओं से अपनी रक्षा करनी पड़ती है क्योंकि उसकी 'पवित्रता' ही उसकी रक्षा के लिए यथेष्ट है ।

जो मनुष्य अपवित्र है, उसे प्रायः सभी बातों में दबना पड़ता है क्योंकि वह मनो-विकार और पक्ष-पात का दास बना रहता है । दूसरों के विषय में वह मिथ्या मन्तव्य स्थिर कर लेता है, इसलिए उसको दूसरों के द्वारा सदा दुःख पहुँचता है । जब दूसरे उस पर दोषारोपण करते हैं, तब उसे बड़ा दुःख पहुँचता है क्योंकि वह वास्तव में 'स-दोष' है और चूँकि उसके पास अपनी रक्षा करने के लिए 'पवित्रता' नहीं होती, इसलिए वह बदला लेकर अथवा तरह-तरह की दलीलें या धोखा देकर अपने आपको निर्दोष सिद्ध करने का प्रयत्न करता है ।

[पृष्ठ ६७ का शेषांश]

पार कर जाता है । ऐसा ही मनुष्य 'तन-रूपी-रत्न' को पाकर सफल होता है और उसी का जीवन इस असार संसार में धन्य समझा जाता है ।

यह कार्य कहने में जितना सरल है, उतना करने में नहीं । बुद्धिमान मनुष्यों को चाहिए कि इस जगत् में जितने कार्य सामने आएँ, उनमें 'अ-कर्म' की खोज करें, और 'अ-कर्म' में 'कर्म' का अन्वेषण करें, तभी कुछ प्राप्त कर सकते हैं ।

'गीता' भी यही बताती है—"...जो मनुष्य संसार के सभी कर्मों में 'अ-कर्म' को खोज निकालता है तथा 'अ-कर्म' में 'कर्म' को देखता है, वही मनुष्यों में बुद्धिमान है तथा वास्तविक योगी है ।"

ॐ

महा-मन्त्र गायत्री

'कुल-भूषण' पं० रमादत्त शुक्ल

'उत्कर्ष' की कामना किसे नहीं होती ? प्रत्येक व्यक्ति चाहता है कि वह अपने जीवन में हिमालय के हिमाच्छादित शिखरों जैसा 'उत्कर्ष' प्राप्त कर ले, किन्तु इसके लिए वैसा ही पुरुषार्थ भी करना पड़ता है। निष्ठा और नियम-पूर्वक लक्ष्य की ओर आगे बढ़नेवाले निश्चय ही अभीष्ट 'उत्कर्ष' को प्राप्त कर लेते हैं, यह सत्य है, परन्तु यह भी सत्य है कि उन्हें कितनी ही बाधाओं का सामना करना पड़ता है। सामान्य बाधाओं को तो अपने कार्य-कौशल और परिश्रम से लोग पार कर ले जाते हैं, किन्तु ऐसी भी बाधाएँ सामने आती हैं, जिनका सामना करना प्रायः असम्भव-सा लगता है—मानवीय पुरुषार्थ का कोई वश उनके सामने नहीं चलता।

भारतीय ऋषियों ने उक्त प्रकार की असाध्य बाधाओं को पार करने के लिए ही महा - मन्त्र 'गायत्री' का उपदेश किया है। इस मन्त्र के अभ्यास से शूद्रता अर्थात् अज्ञानता का निवारण होता है। साथ ही उन अशुद्ध भावनाओं से रक्षा होती है, जिनके कारण जीवन में अभीष्ट 'उत्कर्ष' की उपलब्धि नहीं हो पाती। इसके अतिरिक्त इस 'मन्त्र' के प्रभाव से सूर्य - जैसी तेजस्विता प्राप्त होती है, जिसके समक्ष सभी प्रकार की बाधाएँ धूमिल पड़ जाती हैं।

भौतिकता और स्वार्थ-परायणता के इस कलि-युग में ऋषियों के अनुभूत मन्त्र-विज्ञान के प्रति शिक्षित भारतीयों का वैसा ध्यान नहीं है, जैसा होना चाहिए। पाश्चात्य सभ्यता के धुआँधार दुष्प्रचार के समक्ष किसी को मौलिक रूप से सोचने-विचारने का अवकाश ही नहीं मिलता। अहर्निश 'मम्मी', 'डैडी', 'पापा' जैसे विपरीतार्थक शब्द जिस परिवेश में गूँज रहे हों और 'दूर-दर्शन' तथा 'वीडियो' जैसे अनिवार्य माध्यमों से लगातार भोंडे सङ्गीत, नृत्य-गायन आदि का प्रदर्शन हो रहा हो, वहाँ ऋषियों के पवित्र प्रातः-स्मरण, सन्ध्या-वन्दनादि के लिए क्या किञ्चित् भी अवसर आज शेष है ? फलतः **'उत्कर्ष'** के स्थान पर 'अपकर्ष' की ही नींव पक्की होती दिखाई देती है।

सन्तोष की बात यही है कि उक्त अन्धकार - पूर्ण वातावरण में भी कभी - कभी ऐसे व्यक्तित्व अपनी चमक से ऋषियों की सार्थक वाणी की उपयोगिता को प्रत्यक्ष दर्शाते रहते हैं और भाग्य - शाली लोग उस चमक से मार्ग-दर्शन प्राप्त कर **'उत्कर्ष'** की दिशा में अग्रसर होने लगते हैं। उदाहरण के लिए यहाँ प्रयाग उच्च न्यायालय के अवकाश-प्राप्त मुख्य न्यायाधीश श्री महेशनारायण शुक्ल की अंग्रेजी में लिखित और प्रकाशित उस पुस्तिका (माई एक्सपेरीमेण्ट्स विद गायत्री) का उल्लेख करना पर्याप्त होगा, जिसमें उन्होंने अपने सतत उत्कर्ष - मय जीवन के लिए मुक्त कण्ठ से **'गायत्री मन्त्र'** को ही श्रेय दिया है। माननीय न्याय-मूर्ति द्वारा उक्त पुस्तिका में अपने जीवन की अनुभूत घटनाओं द्वारा प्रमाणित किया गया है कि न केवल **'आध्यात्मिक'**, अपितु **'भौतिक उत्कर्ष'** की भी उपलब्धि **'गायत्री मन्त्र'** द्वारा कोई भी निष्ठा-परायण व्यक्ति कर सकता है।

महा-मन्त्र **'गायत्री'** के शब्दार्थ से ही उसकी **'भोग'** और **'मोक्ष'**—दोनों प्रकार के **'उत्कर्ष'** देने की विलक्षण शक्ति का बोध होता है क्योंकि **सूर्य-देव के जिस उत्कृष्ट तेज से अपनी बुद्धियों को प्रेरित**

भारत का आदर्श

[※] **'कुल-शेखर' श्री महेशचन्द्र गर्ग, प्रयाग**

आजकल हमारे देश में कुछ ऐसी शङ्का लोगों को हो चली है कि यहाँ जन-मात्र के आगे कोई आदर्श नहीं है। मेरी विनम्र सम्मति में ऐसी बात नहीं है। भारत-वर्ष के जन-मात्र के सामने सदा एक सु-निश्चित आदर्श रहा है और आज भी है। आज के चरम भौतिक-वादी युग में भी उस आदर्श के गलत या सही होने की कठोर परीक्षा हो रही है।

वह आदर्श क्या है? इसे जानने से पहले हम 'आदर्श' को ही समझ लें कि वह क्या है? 'आदर्श' है—**श्रेयस् का समुच्चय**—अच्छी बातों का समूह, जो हमें कल्याण की ओर ले जानेवाला है।

'भारत' आत्म-ज्ञान-रूपी अमृत का उपासक रहा है। 'आत्म-ज्ञान' की प्रार्थना **'तत्-सवितुर्वरेण्यं'** से गायत्री 'महा-मन्त्र' में की गई है। इसी महा-मन्त्र के द्वारा जीवात्मा **'तत्त्वमसि'** के बाद **'परो रजसे सावदोम्'** की अनुभूति करता है। 'आत्म-ज्ञान' का सच्चा साधक 'कठोपनिषद्' का 'नचिकेता' भारत का प्राचीन आदर्श है। वेदों से लेकर श्रीमद्-भागवत तक **'सत्यं परं धीमहि'** की प्रेरणा ऋषियों के द्वारा की गई है। कारण, लौकिक भोग-मूर्तियों में वह स्थिरता या आकर्षण नहीं है, जो 'आत्म-ज्ञान'-रूपी आदर्श में है। नचिकेता ने कहा था—"... **हे यम, मनुष्य कभी भी धन से तृप्त नहीं किया जा सकता। जब आपके दर्शन पा लिए हैं, तो धन तो प्राप्त हो ही जायगा। आपका अनुग्रह है, तो यथेच्छ जीवन भी भोगने को मिलेगा; किन्तु 'धन' और 'जीवन' से बढ़कर मेरे माँगने योग्य वर तो वही है**—'आत्म-ज्ञान'।

[पृष्ठ ६९ का शेषांश]

करने की प्रार्थना की जाती है, वह भू-लोक, अन्तरिक्ष-लोक और स्वर्ग-लोक—तीनों लोकों के कोने-कोने में व्याप्त है। इस प्रार्थना को वैदिक ज्ञान के समवेत कोष 'ॐ' से विभूषित कर ऋषियों द्वारा इसे विशेष ऊर्जा से संयुक्त किया गया है। ऐसी दशा में इस 'मन्त्र' के अहर्निश स्मरण से **'शूद्रत्व'** से छुटकारा पाकर व्यक्ति यदि **'द्विजत्व'** को प्राप्त कर लेता है, तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

'जन्मना जायते शूद्रः, संस्काराज्जायते द्विजः'—अर्थात् जन्म से प्रत्येक व्यक्ति 'शूद्र' होता है और 'संस्कार' द्वारा वह 'द्विज' बनता है। इस अनुभूत कथन के प्रति ध्यान न देकर आज के भारतीय निर्दिष्ट 'संस्कार' से हीन होकर **'अपकर्ष'** की ही ओर अग्रसर हो रहे हैं।

ऋषियों द्वारा निर्दिष्ट जितने भी **'संस्कार'** हैं, सभी परा-विज्ञान-सम्मत हैं किन्तु दीर्घ-कालीन राजनैतिक दासता के कारण एक ओर तो उस 'परा-विज्ञान' की परम्परा लुप्त - प्राय होती गई, दूसरी ओर पाश्चात्य सभ्यता की शिक्षा-दीक्षा एवं भौतिक विज्ञान की चमक - दमक के समक्ष उक्त अनुभूत **'संस्कार'** सर्वथा उपेक्षित होते गए। जो इने-गिने बचे भी, वे केवल नाम भर को। 'शूद्रता' से छुट-कारा दिलाकर 'द्विजत्व' की प्राप्ति करानेवाले **'उपनयन-संस्कार'** की जो छीछालेदर आज दिखाई दे रही है, उसे देखकर किसी भी समझदार व्यक्ति का मस्तक ग्लानि से झुक जायगा।

'उपनयन' या 'यज्ञोपवीत' द्वारा ही ८-९ वर्ष की आयु में **'गायत्री मन्त्र'** और **'सन्ध्योपासन'** का उपदेश दिया जाता था, जिसके फल - स्वरूप बाल्यावस्था से ही मन, बुद्धि, चित्त और अहङ्कार को सन्मार्ग-दर्शन मिलने लगता था और एक-से-एक मनीषी महा-पुरुषों से समाज एवं राष्ट्र के गौरव की वृद्धि होती थी। इतिहास से इस तथ्य को आज भी कोई जान सकता है कि भौतिक एवं आध्यात्मिक 'उत्कर्ष' का कैसा अमोघ, अव्यर्थ और अनिवार्य एक-मात्र साधन है—**महा-मन्त्र गायत्री**।

स्वर-योग

श्री भैरवानन्दनाथ, शाम्भवी तान्त्रिक शोध संस्थान, १०८ चकराघाट, सागर (म.प्र.)

पञ्च-तत्त्व का आध्यात्मिक अर्थ

१ पृथ्वी, २ जल, ३ वायु, ४ अग्नि और ५ आकाश—ये पाँच तत्त्व विश्व के निमित्त कारण हैं। सामान्य व्यक्ति इन शब्दों के केवल शाब्दिक अर्थ मात्र को ही जानते हैं। जैसे 'पृथ्वी' - तत्त्व से पृथ्वी के दिखाई देनेवाले रज-कण इत्यादि; 'जल'तत्त्व से नदी, तालाब, कुएँ इत्यादि का पानी; 'अग्नि' - तत्त्व से चूल्हे या दियासलाई की आग या विद्युत्; 'वायु'-तत्त्व से आँधी और 'आकाश'-तत्त्व से नीला आसमान !

ये शाब्दिक अर्थ इन तत्त्वों के वास्तविक स्वरूप को हृदयङ्गम नहीं होने देते। अतः इन्हें भुलाकर इनके वैज्ञानिक अर्थों को जानना-समझना चाहिए।

सूक्ष्म योग-विज्ञान के अनुसार 'पृथ्वी'-तत्त्व का अर्थ है—'स्थायित्व', 'जल'-तत्त्व का 'आर्द्रत्व', 'अग्नि'-तत्त्व का 'तेज' या 'ओज', 'वायु'-तत्त्व का 'स्पन्दन' और 'आकाश'-तत्त्व का 'शून्य'। संक्षेप में इन पाँचों तत्त्वों का अर्थ इस प्रकार हृदयस्थ करना होता है कि 'वायु - तत्त्व' शब्द आते ही ध्यान बहनेवाली या बिजली के पङ्खे की हवा पर न जाकर 'सञ्चार-गति-स्फुरणा' पर जाए; 'अग्नि - तत्त्व' शब्द आते ही ध्यान चूल्हे की आग के स्थान पर 'तेज' और 'ओज' पर जाए। तभी इस विषय को समझा जा सकता है।

'चन्द्र'-स्वर एवं 'सूर्य'-स्वर का परिचय

प्रत्येक तत्त्व के उदय और अस्त की स्थिति स्वरों द्वारा जानी जाती है। कब कौन-सा स्वर चल रहा है, यह प्रत्येक व्यक्ति आसानी से जान सकता है। नासिका के छिद्र से श्वासोच्छ्वास करते हुए रुकावट महसूस हो, उसे बन्द तथा दूसरे को खुला मानना चाहिए। बाँएँ नासा - छिद्र से प्रवाहित होने पर 'वाम' या 'चन्द्र - स्वर' तथा दाएँ नासा - छिद्र से प्रवाहित होने पर 'दक्षिण' या 'सूर्य - स्वर' कहा जाता है।

प्रत्येक नासा-रन्ध्र से स्वरोदय होने के बाद वह सामान्यतया १ घण्टे या २।। घड़ी तक विद्यमान रहता है। अतः जब भी श्वासोच्छ्वास एक नासा-छिद्र बदलकर दूसरे में जाएगा, तब वह उसमें एक घण्टे तक रहेगा। आवश्यक होने पर 'दक्षिण स्वर' को 'वाम स्वर' में तथा 'वाम स्वर' को 'दक्षिण स्वर' में बदला जा सकता है। 'वाम स्वर' को 'दक्षिण स्वर' में बदलने के लिए, बाँईं करवट लेट जाने से लगभग ५ मिनट में स्वर बदल जाता है। इसी प्रकार 'दक्षिण स्वर' को 'वाम स्वर' में बदला जा सकता है। जो 'स्वर' चलाना हो, उसके विरुद्ध छिद्र में रुई का फाहा लगा देने या किसी भी अन्य तरीके से चालू स्वर को रोक देने पर इच्छित 'स्वर' चालू किया जा सकता है।

सामान्य स्वस्थ शरीर में 'शुक्ल'-पक्ष की १, २, ३, ७, ८, ६, १३, १४ और १५ वीं तिथियों में सूर्योदय से एक निश्चित समय तक वाम या 'चन्द्र'-स्वर तथा ४, ५, ६, १०, ११ और १२ वीं तिथियों में दक्षिण या 'सूर्य'-स्वर चलता है। इसी प्रकार 'कृष्ण'-पक्ष में १, २, ३, ७, ८, ६, १३, १४ और १५ वीं तिथियों में सूर्योदय से एक निश्चित समय तक दक्षिण या 'सूर्य' - स्वर तथा ४, ५, ६, १०, ११ और १२ वीं तिथियों में वाम या 'चन्द्र'-स्वर चलता है।

तत्त्वों के उदय-काल का परिचय

'स्वर' जिस तत्त्व से प्रभावित होता है, उसे उस तत्त्व की स्थिति या उदय-काल कहते हैं। जैसे 'स्वर' जब 'स्थायित्व' से प्रभावित होता है, तो उसे 'पृथ्वी'-तत्त्व का उदय - काल कहा जाता है। जब आर्द्रत्व से प्रभावित होता है, तब 'जल'-तत्त्व का उदय-काल कहा जाता है। जब तेज, ओज या ऊष्मा से प्रभावित होता है, तब 'अग्नि'-तत्त्व का उदय-काल कहा जाता है इत्यादि।

प्रकृति के सब नियम गणित पर आधारित हैं, जिनमें कहीं किसी प्रकार की त्रुटि नहीं होती। स्वरों में तत्त्वों के उदयास्त का काल भी निश्चित है। जिस प्रकार एक 'स्वर' एक स्वस्थ व्यक्ति के शरीर में एक घण्टे चलकर बदल जाता है, ठीक इसी प्रकार प्रत्येक 'स्वर', अपने समय में पाँच स्थितियों या प्रभावों से प्रभावित रहता है। इसका गणित इतना सरल है कि एक छोटा बालक भी इसे सरलता से याद रख सकता है।

प्रत्येक 'स्वर' एक घण्टे तक चलता है और एक घण्टे में ६० मिनट या २॥ घड़ी या १५० पल होते हैं। इसे समझने के लिए ४ और १० के पहाड़े याद रखने से काम चल जाता है, वह भी सिर्फ ५ अङ्कों तक जैसे—४-८-१२-१६-२० अथवा १०-२०-३०-४०-५०। इनका जोड़ किया जाय तो ६० और १५० आता है अर्थात् ६० मिनट या १५० पल यानी १ घण्टा।

तत्त्वों को विपरीत क्रम से गिने। यथा—आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी। 'स्वर' के उदय-काल से प्रारम्भ के ४ मिनट 'आकाश'-तत्त्व, ८ मिनट 'वायु'-तत्त्व, १२ मिनट 'अग्नि' - तत्त्व, १६ मिनट 'जल' - तत्त्व और २० मिनट 'पृथ्वी' - तत्त्व का प्रभाव रहकर दूसरा स्वर बदल जाता है। दूसरे शब्दों में १० पल 'आकाश'-तत्त्व, २० पल 'वायु'-तत्त्व, ३० पल 'अग्नि'-तत्त्व, ४० पल 'जल'-तत्त्व और ५० पल 'पृथ्वी'-तत्त्व रहकर स्वर बदल जाता है।

यह तो हुआ स्वरों का उदयास्त और उनके मध्य तत्त्वों की स्थिति का वर्णन, किन्तु यह कैसे मालूम किया जाय कि किस समय कौन से तत्त्व की स्थिति है? 'स्वरोदय'-विज्ञान ही एक ऐसा विज्ञान है, जिसे सिर्फ समझ लेने भर से लोक और पर-लोक की सम्पूर्ण सफलताएँ कर - बद्ध खड़ी हो जाती हैं, किन्तु जब तक तत्त्वों से परिचय नहीं होता, तब तक उनसे लाभ उठाने के लिए सोचना भी निरर्थक है।

(क्रमशः)

(१)

'श्री छाया-पीठ' का महोत्सव

❋ पण्डित वटुकनाथ शास्त्री खिस्ते, वाराणसी (उ० प्र०)

इस वर्ष वासन्तीय नवरात्र में सौभाग्य से मुझे सुदूर **'तमिलनाडु'** के कावेरी-तटवर्ती **'तिरूइन्गो-इमलाई'** या **'छाया - पीठ'** की यात्रा का अवसर प्राप्त हुआ। वहाँ एक विशेष 'महोत्सव' का आयोजन था, जिसमें देश भर के श्रीविद्योपासकों को आमन्त्रित किया गया था। **'छाया - पीठ'** के ही साधक-प्रवर श्री महा-मेधानन्दनाथ जी (उत्कल-निवासी) के विशेष स्नेह और आग्रह के कारण मैं वहाँ जाने को उद्यत हुआ। यद्यपि यात्रा दूरी के कारण कुछ कष्ट-साध्य थी, परन्तु भगवती के नवीन पीठ के दर्शन की लालसा ने उसके प्रति मुझमें उत्साह उत्पन्न किया।

'तमिल'-भाषा-भाषी युवक श्री टी० वी० नारायणन् को साथ लेकर वाराणसी से मैं ६ अप्रैल को गङ्गा-कावेरी भू-यान से निकला और तीसरे दिन मध्य-रात्रि तक **'छाया-पीठ'** के क्षेत्र में जा पहुँचा।

प्रातः-काल ही श्री महा-मेधानन्द जी मिले एवं प्रसन्न - मुद्रा में उन्होंने मेरा स्वागत किया। कई एकड़ भूमि के विस्तार के मध्य में, थोड़ी ऊँचाई पर, मध्य-भाग में **भगवती श्रीललिताम्बा** का मन्दिर अवस्थित है। मन्दिर के अन्दर, ऊँचे चबूतरे पर, मण्डप है, जिसके ठीक मध्य में विशाल आकार का **'मेरु - पृष्ठ श्रीचक्र'** प्रतिष्ठित है और उसके पीछे श्रीमाता की सुवर्ण - मयी ध्यान - सम्मत मूर्ति भी विराजमान है।

जगन्माता के ५१ शक्ति-पीठ तन्त्रों और पुराणों में प्रसिद्ध हैं। कहा जाता है कि दक्ष - यज्ञ में सती के देह-पात के बाद भगवान् शिव उनका शरीर कन्धे पर लेकर, उन्मत्तावस्था में भ्रमण करने लगे। श्री विष्णु भगवान् ने, देवताओं की सलाह से, अपने सुदर्शन-चक्र से सती के देह-खण्ड काटकर भूमि पर गिराए, जिससे भगवान् शिव मोह-युक्त हो सकें। पृथ्वी पर जहाँ-जहाँ उक्त देह-खण्ड गिरे, वहीं **'शक्ति-पीठ'** स्थापित हो गए।

'छाया-पीठ' में भगवती के 'मुख की छाया' या 'प्रभा' गिरी, अतः यह **'छाया-पीठ'** कहा जाता है। इस पीठ के सम्बन्ध में अनेक कथाएँ प्रसिद्ध हैं। यहीं पर परम उपासक महर्षि अगस्त्य ने 'मक्षिका' (मक्खी) के रूप में निवास किया था, अतः इसे **'मक्षिका-पीठ'** भी कहते हैं। आचार्य अगस्त्य **'श्री-विद्या'** की उपासना के प्रमुख 'गुरु' हैं। 'ब्रह्माण्ड-पुराण' में इनकी चर्चा आई है।

वर्तमान काल में परम तपस्वी और महान् साधक आचार्य-प्रवर श्री १०८ अद्वयानन्द सरस्वती जी ने इस **'छाया - पीठ'** का पुनरुद्धार कर श्रीविद्योपासना का शास्त्रीय क्रम लोक - कल्याण के लिए प्रवर्तित किया है। सम्प्रति आपकी अवस्था नब्बे वर्ष की है। आपकी शिष्याएँ—१०-१२ योगिनियाँ, जो **'अम्बा'**-नाम से सम्बोधित होती हैं, शास्त्रीय विधि से सम्पन्न उपासना-क्रम को चला रही हैं।

उपासना दो प्रकार की होती है—१ नित्य और २ नैमित्तिक। नित्य - उपासना में 'प्रातः-स्मरण' से लेकर 'चक्र - पूजा' तक का विधान है। 'नैमित्तिक उपासना' में नवरात्रों और पूर्णिमा, संक्रान्ति आदि पर्वों पर विशेष सम्भार या सामग्री के साथ पूजा, सहस्र-नामार्चन, होम, जप, सुवासिनी तथा कुमारी-पूजा एवं ब्राह्मण-भोजन आदि सम्पन्न होता है।

'छाया-पीठ' की 'अम्बा-योगिनी' देवियों का शास्त्रीय ज्ञान और उच्चारण अत्यन्त शुद्ध है। साथ ही उनकी भक्ति-भावना का अनूठा प्रभाव भी स्पष्ट अनुभव में आता है। बिना भावना के उपासना में आनन्द का आविर्भाव हो ही नहीं सकता। मैंने स्वयं अनुभव किया कि उपासना का प्रभाव पूरे वातावरण पर पड़ रहा है। अत्यन्त मधुर शब्दों में की गई प्रार्थना, समर्पण आदि का विधान अन्तःकरण को सहज ही भावार्द्र कर देता है।

इस वर्ष 'छाया-पीठ' में वासन्तीय नवरात्र में तीन दिनों का विशेष कार्य-क्रम था—**महाष्टमी के दिन श्रीललिता-सहस्र-नामों से लक्ष-पुष्पार्चना।** सौ उपासक मण्डलाकार बैठकर सुगन्धित पुष्पों से **'सहस्र-नाम'** के द्वारा पूजन कर रहे थे। मैं भी उनमें समाविष्ट था। उसके बाद **'श्रीललिता-त्रिशती'** से भी पुष्पार्चन किया गया। मध्याह्न में **'बाला (कुमारी) पूजा'** और **'षोडश-नित्या-रूपिणी सुवासिनियों'** का मन्त्रों के द्वारा पूजन किया गया। साथ ही समागत श्रीविद्योपासक साधकों की भी अभ्यर्चना की गई। सायं-काल 'श्रीललिता-सहस्र-नाम' पर मेरा व्याख्यान हुआ। दूसरे दिन 'त्रिशती' पर भी व्याख्यान हुआ। अन्य विद्वानों ने भी अपने आशय व्यक्त किए।

महा-नवमी को प्रत्यक्ष चतुः-षष्टि (६४) उपचारों से **'नवावरण-पूजा'** की गई। भगवती का **'वसन्त-होलोत्सव'** सङ्गीत के साथ सम्पन्न हुआ। दशमी को प्रातः-काल ब्राह्म-मुहूर्त से **'श्रीललिता महा-याग'** प्रारम्भ हुआ। अनेक कुण्डों पर एक - एक अम्बा 'योगिनी' यजमान के रूप में तथा साधक - गण सहायक होता के रूप में बैठे थे। पुष्प, फल, आज्य, तिल आदि से आवरण-देवता, अङ्ग-देवता, सहस्र-नाम, त्रिशती आदि का महा-याग सम्पन्न हुआ। अन्त में महा-कुम्भाभिषेक और अभिषेक हुआ तथा योगिनी-पूजा की गई।

प्रति-दिन अखण्ड 'भण्डारा' चलता था। जो भी साधक स्त्री - पुरुष तथा अभ्यागत आए थे, उनके लिए दोनों समय 'काफी' तथा 'भोजन' की व्यवस्था प्रशंसनीय थी।

'छाया - पीठ' के उक्त महोत्सव का संक्षिप्त विवरण ही यहाँ दिया गया है। वस्तुतः इस 'महोत्सब' के अन्तर्गत अनेक शास्त्रीय विधियों का सम्पादन किया गया, जो वर्तमान युग में क्वचित् ही

दिखाई देता है। इस सन्दर्भ में आचार्य-प्रवर श्री महा-मेधानन्दनाथ जी अभिनन्दनीय हैं, जिनके प्रयास और सहयोग से इस पीठ में जगदम्बा महा-राज्ञी का यथा-वत् आराधन चल रहा है और भविष्य में चलेगा। साथ ही, कोई भी दर्शक या साधक **'अम्बा'**-शब्द से सम्बोधित योगिनियों की त्याग, तपस्या तथा तत्परता को देखकर भावाभिभूत हुए बिना नहीं रह सकता। आशा है, आगे भी **'श्रीललिताम्बा महा-राज्ञी'** अपने भक्तों पर कृपा-दृष्टि बनाए रहेंगी।

(२)

मध्य प्रदेश का श्री ज्वाला देवी मन्दिर

लगभग तीन सौ वर्ष पूर्व सन् १७०० के आस - पास 'मध्य - प्रदेश' के जनपद 'दुर्ग' के ग्राम 'सोनपुर' में 'भगत बाबा' नामक एक गृहस्थ प्रख्यात सन्त हुए, जिनका पूरा नाम किसी को ज्ञात नहीं है। जाति के 'रावत' अर्थात् 'अहीर—यादव' थे। उन्हीं के द्वारा पहले-पहल **'श्री ज्वाला देवी'** के मन्दिर या मूर्तियों की स्थापना उक्त गाँव में हुई। महा - माया, ज्वाला और काली या महा - काली—इन तीन रूपों की मिट्टी की मूर्तियाँ 'घट' (कुम्भ या कलश) के ऊपर प्रतिष्ठित हैं।

'श्रीदुर्गा-सप्तशती' के प्रमाण के अनुसार धातु या पाषाण - मूर्ति की अपेक्षा 'मृत्तिका - मूर्ति' अधिक महत्त्व-पूर्ण है। विशेषता यह है कि पुरी (उड़ीसा) की श्रीजगन्नाथ-मूर्तियों के समान ही 'सोनपुर' की उक्त मूर्तियाँ भी 'अनङ्ग' अर्थात् अङ्ग-हीन ही हैं।

यहाँ प्रत्येक मूर्ति के नीचे—एक-के-ऊपर एक के क्रम से तीन कलश आधार - रूप में स्थित हैं। सबसे नीचे बड़ा कलश, मध्य में उससे छोटा और सबसे ऊपर वाले कलश से माई के 'कटि' - भाग (कमर) का दर्शन होता है। चरण नहीं हैं। दोनों भुजाएँ केवल कुहनी तक हैं। मुख - मण्डल भव्य एवं बड़ा मनोहर रूप है। शृङ्गार होने पर साक्षात् दिव्य दर्शन होते हैं।

उक्त तीन मूर्तियों की स्थापना अपने ढँग की विलक्षण है। इसे 'यन्त्र - मूर्ति' की स्थापना कह सकते हैं। ३०० वर्ष बाद भी मृत्तिका-मूर्तियों में चाँदी के सिक्के के समान टनटनाहट है, जो दर्शकों को आश्चर्य में डाल देती है। प्राचीन-काल के कुम्भकारों द्वारा धान के पैरे (घास-भूसी) के ढेर में दबा कर उक्त मूर्तियों को पकाया गया और विधि-विधान से प्राण-प्रतिष्ठा की गई। 'महा - माया' और 'ज्वाला देवी' की मूर्तियाँ सिन्दूर-वर्णा हैं, किन्तु 'काली' की अपने नामानुरूप ही है।

उक्त प्रकार की तीन मूर्तियाँ या तो काशी (वाराणसी-उ. प्र.) में हैं, या यहाँ 'सोनपुर' में। हाँ, गुजरात के सूरत, पावागढ़ और बड़ौदा के आस-पास अवश्य जरी-रेशम के कपड़ों पर 'यन्त्र-मूर्तियों' के रूप में देवी की पूजा 'अम्बा माता' के नाम से देखने को मिलती है। वहाँ 'काली' की पूजा काले कपड़े पर और 'माँ अम्बा' की लाल, पीले या श्वेत वस्त्र पर होती है, किन्तु **'मृत्तिका-मूर्तियों'** का महत्त्व कहीं अधिक है, जिसकी पुष्टि 'श्रीदुर्गा-सप्तशती' के उस दृष्टान्त से होती है, जिसके अनुसार राजा सुरथ और समाधि वैश्य ने मिट्टी की ही मूर्तियाँ बना कर मां के द्वारा अभीष्ट वर प्राप्त किया था।

उक्त **'श्रीज्वाला मन्दिर'** के प्राचीन मन्दिर के नव-निर्माण की योजना बन चुकी है। नवीन मन्दिर में भगवती श्रीदुर्गा की भी स्थापना का विचार है। जयपुर (राजस्थान) से उनकी सङ्गमर्मर की प्रतिमा बन कर आ चुकी है। प्रतिमा के लिए १२ हजार रुपयों का व्यय वहन किया गया है। देवी-परिवार के अन्य देवताओं (भगवान् शङ्कर, गणेश, भैरव, योगिनी) आदि की भी स्थापना का विचार है। मेरा अपना ४० वर्ष का अनुभव है कि जो कुछ मैं लिख रहा हूँ, वह सर्वथा सत्य है। उसमें किसी प्रकार का न तो 'अहं'-भाव है और न किसी की अवमानना करने का विचार। लोगों का कहना है कि **'भगत बाबा'** श्री रामकृष्ण परमहंस के समान ध्यान करते-करते समाधिस्थ हो जाया करते थे। माँ से उनका वार्तालाप होता था। रात्रि १२ बजे के बाद वे 'गरबा' (रास-लीला) नृत्य करते थे।

दर्शनार्थियों की भीड़ लगी रहती थी। मनोकामना पूर्ण होनेवाले मनौती चढ़ाते थे। प्रत्येक नवरात्र में ज्योति - कलश, ज्वारा आदि की धूम रहती थी। उन दिनों यह ग्राम नागपुर के 'भोंसला महाराज के अधीन था। उनके सन्तान नहीं होती थी या होती थी, तो मर जाती थी। **'श्रीज्वाला देवी'** की महिमा सुनकर वे महा-रानी सहित आए और पूजा-मनौती की। फलतः उनका वंश चला, ऐसा ताम्र-लेख है।

'सोनपुर' ग्राम का पोस्ट, थाना एवं तहसील **'पाटन'** है। 'दुर्ग'—३५ कि० मी० पर और 'रायपुर'–३७ कि० मी० पर निकटस्थ नगर हैं। पूर्वी रेलवे के ये विख्यात स्टेशन हैं। भारत के मान-चित्र में देश के मध्य-केन्द्र में यह 'सिद्ध ज्वाला-पीठ' स्थित है। आजकल यहाँ के पुजारी दशनाम - पन्थ के श्री सुन्दर भारती हैं। मन्दिर का नव-निर्माण होने पर दर्शनार्थियों के ठहरने की व्यवस्था भी करने का निश्चय किया गया है। 'दुर्ग - वाराणसी' रेलगाड़ी सप्ताह में तीन बार चलती है, जिसके द्वारा दर्शनार्थी यहाँ पहुँच सकते हैं। विशेष जानकारी हेतु पाठक बन्धु निम्न पते पर सम्पर्क कर सकते हैं—

पं० जुगलकिशोर मिश्र, 'श्रीज्वाला मन्दिर', मु० सोनपुर, पो० पाटन, जि० दुर्ग (म. प्र.)–४९१११

(३)

'श्री पीताम्बरा-पीठ' का चिकित्सालय

धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष—चतुर्विध पुरुषार्थ का साधन 'आरोग्य' ही श्रेष्ठ कारण है और 'रोग' उस श्रेय तथा जीवन को हरनेवाले हैं।

'श्रीपीताम्बरा-पीठ' के संस्थापक अनन्त-विभूति 'राष्ट्र-गुरु' श्री स्वामी जी महाराज की प्रेरणा रही कि रोगों से पीड़ित लोगों के रोग - निवारणार्थ आयुर्वेदिक पद्धति का 'चिकित्सालय' स्थापित हो।

'श्री पीताम्बरा पीठ ट्रस्ट' की अध्यक्षा राज-माता श्रीमती विजय राजे सिन्धिया एवं महा - मन्त्री पं० श्री सूर्यदेव जी शर्मा ने पूज्य श्री स्वामी जी की प्रेरणा से सङ्कल्प कर उक्त 'श्रीपीताम्बरा-पीठ आयुर्वेद-चिकित्सालय' का निर्माण कराया। इस 'चिकित्सालय' का उद्‌घाटन दिनाङ्क ५ नवम्बर, १९८७ को 'श्री धन्वन्तरि-जयन्ती' की पावन तिथि पर दतिया की जिलाधीश श्रीमती अरुणा शर्मा की अध्यक्षता में माननीय सांसद् श्रीकृष्ण सिंह जू देव ने किया। उसी दिन डॉ० रामेश्वरप्रसाद पाण्डेय आयुर्वेदाचार्य को 'श्रीपीताम्बरा - पीठ ट्रस्ट' ने प्रमुख चिकित्सक के पद पर नियुक्त कर निःशुल्क चिकित्सा - कार्य प्रारम्भ किया। तब से पचास हजार से अधिक नए रोगियों का पञ्जीकरण हो चुका है। उनकी निःशुल्क चिकित्सा की गई। अब तक नित्य आनेवाले नए व पुराने रोगियों को मिलाकर तीन लाख से अधिक रोगियों की निःशुल्क चिकित्सा हो चुकी है।

'श्रीपीताम्बरा-पीठ आयुर्वेदिक चिकित्सालय' में गरीब-अमीर—प्रत्येक रोगी की निःशुल्क ही चिकित्सा की जाती है। 'चिकित्सालय' को 'श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद-भवन' की ओर से स्व० पं० रामनारायण शर्मा वैद्य की भावनाओं के अनुसार सकारात्मक सहयोग प्राप्त होता रहता है। इस चिकित्सालय की ख्याति सुनकर आस - पास के जिलों—जैसे ग्वालियर, भिण्ड, शिवपुरी, झाँसी आदि से भी रोगी चिकित्सा कराने आते हैं और स्वास्थ्य-लाभ लेते हैं।

आयुर्वेद-चिकित्सा का चमत्कार देखकर उच्च पदों पर आसीन जज, मैजिस्ट्रेट एवं प्रशासनिक उच्च अधिकारी एवं 'एलोपैथी' के चिकित्सक तक 'आयुर्वेद' में विश्वास रखकर अपनी चिकित्सा कराते हैं। इस 'चिकित्सालय' को 'पूर्ण अष्टाङ्ग आयुर्वेदिक चिकित्सालय' के रूप में विकसित करने का 'श्रीपीताम्बरा-पीठ ट्रस्ट' का सङ्कल्प है।

'चिकित्सालय' के प्रमुख चिकित्सक द्वारा अपने वाहन से आस-पास के ग्रामीण इलाकों में बसे गरीब हरिजनों और आदि-वासियों के घरों पर जाकर भी सेवा-भाव से निःशुल्क चिकित्सा की जाती है और विविध रोगों से पीड़ित इन दरिद्रों को रोगों से मुक्ति दिलाई जाती है। यह दुष्कर कार्य माँ पीताम्बरा की कृपा एवं पूज्य गुरु - देव श्री स्वामी जी महाराज की विशेष अनुकम्पा से ही सम्भव हो सका है। गरीब हरिजन आदि - वासियों की चिकित्सा के सम्बन्ध में महा - मन्त्री पण्डित सूर्यदेव जी शर्मा एवं 'श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद - भवन' के स्वामी श्री शिवनाथ शर्मा का प्रोत्साहन - पूर्ण सहयोग निरन्तर प्राप्त रहा है। यह कार्य एक 'हिन्दू-मिशन' के रूप में किया जाता है।

'चण्डी' की विशेषांक-योजना

'चण्डी' वर्ष ५१ की विशेषाङ्क-योजना—(अप्रैल ९२ से मार्च ९३) के अन्तर्गत कुल पाँच विशेषाङ्क प्रकाशित हो रहे हैं—१ शक्ति-तत्त्व (निबन्ध-संग्रह), २ कौल-विलास, ३ शाबर-मन्त्र-संग्रह, भाग ३, ४ सार्थ सौन्दर्य-लहरी, ५ हिन्दी तन्त्रसार। विशेषाङ्क-याजना के सदस्यों को ये पाँच विशेषाङ्क विशेष छूट पर दिए जाएँगे। अतएव आप **विशेषाङ्क-योजना** से अवश्य लाभ उठाएँ।

सभी प्रकार के मनोरथों को सिद्ध करने का अमोघ साधन–

'सप्तशती' (श्रीदुर्गा-पाठ)

श्रीदुर्गा-पाठ की महिमा

अनादि-काल से चलनेवाली सृष्टि में मनुष्य-जीवन ही को प्रकृति ने सबसे ऊँचा स्थान बताया है। या यों कहना चाहिए कि आदि - काल ही से सब पदार्थों को हमें सौंप कर प्रकृति आप बिलकुल स्वतन्त्र हो बैठी और इस कारण संसार में जितना भी भला-बुरा है, वह सब उसने हमें ही दे दिया है, किन्तु सब प्रकार की इस सामग्री के होते हुए भी यदि हम अज्ञानता से उसका ठीक उपयोग न कर सकें, तो यह हमारा ही दोष है। यही मुख्य कारण है कि हम उसके अमूल्य लाभों से वञ्चित रह जाते हैं।

यदि हम विचार करें, तो वास्तव में मनुष्य-जीवन के ऊपर भारी जिम्मेदारी है। हमारे लिए उसकी बड़ाई तभी है, जब हम इस संसार की वास्तविकता को ठीक - ठीक जानने के योग्य हो जाएँ। धर्मादि चार पदार्थों का मनुष्य के शरीर से निकट सम्बन्ध है, किन्तु ये चार पदार्थ तो दूर रहे, अन्य वस्तुओं की प्राप्ति में ही अनेक घोर सङ्कट आ खड़े होते हैं। भली-भाँति जानते हुए भी हम विना किसी प्रबल सहायता के इन्हें रोक नहीं सकते। इन आवश्यकताओं से परिचित होते हुए भी हम केवल मन के सङ्कल्प के सहारे सफल नहीं हो सकते; जब तक कि अपने कर्त्तव्य-ज्ञान के साथ-साथ उस पर आरूढ़ न हो जाएँ और फिर पाप से भरे हुए घोर कलि-युग की तो बात ही क्या है, जहाँ सारी सफलताएँ साध्वी स्त्रियों की तरह उद्योग करने पर भी सौ योजन दूर भाग जाती हैं!

हम अपने मतलब को बिना किसी प्रबल उपाय के नहीं साध सकते, किन्तु यह सब अच्छी तरह सुनकर भी चुप हो जाने से या उदासीन भाव धारण कर लेने से हमारा कल्याण नहीं हो सकता, क्योंकि हमारे भूत, वर्तमान और भविष्य के जाननेवाले दूर-दर्शी ऋषियों, मुनियों ने इस कठिन संसार-सागर की यात्रा के लिए कठिन और सरल-से-सरल उपाय बता दिए हैं, जिनके द्वारा हम इस यात्रा में बराबर चलते रह सकते हैं। इसका सबसे सरल साधन **'भक्ति'** ही है, जिसका सहारा लेकर सर्व-शक्ति-मान् जगत् के पालन करनेवाले परमेश्वर का स्मरण करते हुए और सब सांसारिक बाधाओं का नाश करते हुए हम अपने अनेक मनोरथों को पा सकते हैं।

अति प्राचीन काल में वर्णाश्रम-धर्म के अनुसार स्त्री, शूद्र और अन्त्यज बन्धुओं को वेद पढ़ने का अधिकार नहीं था। औरों के पढ़ने के लिए मनाही नहीं थी। जिनको वेद-पारङ्गत होने का अधिकार

नहीं था, उनके लिए दूसरा कोई उचित मार्ग नहीं था, जिससे वे मोक्ष-पद को प्राप्त कर सकें। इन सब बातों पर ध्यान देकर अति दयालु और सबका हित चाहनेवाले भगवान् वेदव्यास जी ने अठारह पुराण रचे, जिनके भीतर सब किसी के लिए मोक्ष का मार्ग बिना रोक-टोक के खुला हुआ है। ये पुराण केवल **'भक्ति-मार्ग'** हो पर पहुँचानेवाले नहीं हैं, अपितु मनुष्य-जीवन में जो कुछ भी जानने योग्य है, उसका यह खुला खजाना है।

'मार्कण्डेय पुराण' उक्त पुराणों में से एक है, जिसमें आदि-शक्ति-रूपा—जगत् की माता **'महा-माया'** के चरित का वर्णन किया गया है। साधारण रूप से हमारे ग्रन्थों में धर्माचार्यों ने सूर्यादि पञ्च-देवताओं का ही पूजन बतलाया है, किन्तु अत्यन्त महिमावाली भगवती दुर्गा से कोई दूसरा बढ़कर नहीं है। उन्हीं की विभूति से ब्रह्मा, विष्णु, महेश शक्ति-मान् हैं। यह ठीक भी मालूम होता है क्योंकि बिना **'शक्ति'** के किसी को **'शक्ति-मान्'** कहते नहीं बनता। यही कारण है कि जिन देवताओं की पूजा-आराधना की जाती है, उनमें सबसे पहिला स्थान इन्हीं का दिखाई देता है।

कलि-युग में **'शक्ति'** ही संसार-सागर पार करने की एक-मात्र नौका है। कहा भी है कि कलि-युग में केवल चण्डी महा - माया और विनायक गणेश ही देवता हैं। इससे यह निश्चय हुआ कि बिना 'महा-माया' की शरण पकड़े हम आत्म-दर्शन नहीं कर सकते और न सहज ही अपनी चाही हुई वस्तुओं को प्राप्त कर सकते हैं।

मार्कण्डेय पुराण के कर्ता वेदव्यास जी ही हैं, जिन्होंने इसमें भगवती का सम्पूर्ण युद्ध - वृत्तान्त योग-शक्ति के द्वारा जानकर चमत्कार-सहित वर्णन किया है। यह **'दुर्गा - पाठ'** मनुष्य - जाति के लिए साक्षात् कल्प-वृक्ष के समान है और इसी कारण सब तरह से कल्याण का देनेवाला है। इसकी छाया ग्रहण करने से **'भुक्ति'** और **'मुक्ति'** दोनों हमारे लिए सहज बात हो जाती हैं। यदि हम मन, वचन और शरीर से—सभी कर्मों से उसी भगवती की शरण एक भाव से ग्रहण कर लें, तो फिर कभी अपने सेवा-भाव से विचलित नहीं होंगे।

'चण्डी-पाठ' की महिमा कितनी अपार है कि भारत का ऐसा कोई प्रदेश नहीं है, जहाँ इसका प्रचार न हो और जहाँ अमीर से गरीब तक—सबकी इसमें श्रद्धा-भक्ति न हो! सहज होने के कारण चाहे आप स्वयं पाठ करें या किसी दुसरे से कराएँ, इसके फल-विषय में तनिक भी सन्देह नहीं है।

हाँ, इतना अवश्य है कि श्रद्धा बिना पाठ करने से या कराने से कोई भी लाभ नहीं। यदि भक्ति और श्रद्धा के साथ सदा पाठ किया जाय, तो निस्सन्देह अपने मनोरथ को सिद्ध करने के लिए यह अमोघ साधन है। यही कारण है कि आजकल भी बड़े-बूढ़ों के मुख से **'चण्डी - पाठ'** से मिले हुए फलों की कथाएँ सुनने में आती हैं। मैंने स्वयं ऐसे वृद्ध लोगों से, जिन्होंने अपने आप इसका फल देखा है, कितनी ही ऐसी चमत्कार की बातें सुनी हैं, जिनकी सचाई के विषय में तनिक भी सन्देह का स्थान नहीं है।

यद्यपि उन सब बातों का वर्णन करना उचित न होगा, तो भी इस विचार से कि पाठकों का विश्वास बढ़ सकेगा, यहाँ दो-तीन बातों का वर्णन किया जाता है।

सम्वत् १९३१ की बात है। किसी ने किसी राजा से अपना मनोरथ सिद्ध कराने की इच्छा से विधि-पूर्वक **'सहस्र-चण्डी'** का अनुष्ठान कराया। उसके पीछे ५३ वें दिन राजा ने उसे आप ही बुलवाया और पूछकर उसकी इच्छा के अनुसार हुक्म दे दिया।

कुछ दिन बाद उसी व्यक्ति के घर में एक प्रवल रोग ने किसी को घेर लिया। दिन-दिन उसकी हालत शोचनीय होने लगी और जब बचने की आशा न रही, तब उसी उपाय का सहारा लेकर उसने तीन ब्राह्मणों से **'सहस्र-चण्डी-पाठ'** आरम्भ करवाया। अनुष्ठान के ५२ वें दिन वह भयङ्कर रोग एक साथ हट गया और उसके बाद जीवन भर किसी भयङ्कर रोग ने उसे नहीं सताया।

एक क्षत्रिय जमींदार के बन्धुओं ने ऐसा जाल रचा कि वे ही उसकी सारी सम्पत्ति के मालिक बन जाएँ। उन्होंने अदालत में मुकदमा चला दिया। जब अदालतों में मुकदमा जमींदार के विरुद्ध हुआ, तब उसने हाईकोर्ट में अपील की। वहाँ भी अपने विरुद्ध ही फैसला होने की सम्भावना देखकर उसे बड़ी निराशा हुई। तब उसके कुछ ब्राह्मण मित्रों ने उसका चित्त भगवती की ओर खींचा। इनकी राय लेकर ब्राह्मणों-द्वारा उसने **'सहस्र-चण्डी-पाठ'** आरम्भ कराया। ऐसा करते-करते मुकदमे को छः महीने हो गए। सातवें महीने के आने पर भगवती ने साक्षात् प्रकट होकर वर दिया और उसके अनुसार वे ब्राह्मण जमींदार से बोले कि 'अब काम अवश्य सिद्ध होगा, कोई चिन्ता मत करो।' उनके वचन के अनुकूल ही हुआ और आठवें दिन हाईकोर्ट के जज ने उसके अनुकूल निर्णय दे दिया।

'दुर्गा-पाठ' के पहिले चरित में भगवती को ब्रह्म-शक्ति-रूपा बतला कर **'रात्रि-सूक्त'** में उसकी ब्राह्मी स्थिति दिखलाई है। मध्यम चरित में इन्द्रादि देवताओं की स्तुति द्वारा सर्व-मयी, सर्व-व्यापिनी सर्वेश्वरी का वर्णन करके 'निष्काम उपासना' बताई गई है। वर-प्राप्ति के बाद आपद् में पड़े हुए देवताओं ने देवी की स्तुति की। उन्होंने उनकी विपत्तियों को दूर किया। ग्यारहवें अध्याय में देवी की सर्व-रूपता का भली-भाँति वर्णन किया गया है। तेरहवें अध्याय में तप से प्रसन्न देवी ने राजा सुरथ को राज-गद्दी और समाधि वैश्य को अभीष्ट ज्ञान दिया। जिस प्रकार बारहवें अध्याय में उसने देवताओं को वर दिया, उसी प्रकार इन दोनों को भी वर दिया।

उक्त चरितों से यह स्पष्ट है कि जिस किसी को विपत्ति दूर करने की या और किसी प्रकार की मनोकामना हो, तो उसकी प्राप्ति के लिए जगत् को चलानेवाली उसी **'शक्ति'** की उपासना करनी चाहिए। **'चण्डी-पाठ'** किस-किस कामना की सिद्धि के लिए किस-किस प्रकार से प्रयोग करना चाहिए, इसका वर्णन तन्त्रों में होने से यह सर्व-श्रेष्ठ उपाय मानव-कल्याण का बन गया है। * * *

कौल-कल्पतरु चण्डी

'चण्डी' मासिक पत्रिका की विशेषता यह है कि यदि आप इसे ध्यान से पढ़ने की कृपा करेंगे, **तो** आपको **हिन्दू-धर्म के 'व्यावहारिक पक्ष'** को समझने में बड़ी सरलता होगी। 'हिन्दू-धर्म' केवल एक सिद्धान्त या दर्शन मात्र नहीं है। उसका **क्रियात्मक पक्ष** भी है और वही वास्तविक महत्त्ववाला है।

'चण्डी' आपको अपने 'हिन्दू-धर्म' के क्रियात्मक पक्ष का पालन करने में कितनी सहायता दे सकती है, यह तो आप इसे अपना कर स्वयं ही समझ सकते हैं। हम तो इतना ही कह सकते हैं कि जिसने भी **'चण्डी'** को ध्यान से जैसे ही देखा है, वह उसी समय से **'चण्डी' का स्थायी ग्राहक** बन गया।

अतः अपने शहर के समाचार-पत्र-विक्रेताओं से **'चण्डी' मासिक पत्रिका** की आज ही माँग कीजिए अथवा हमें लिखिए—**'चण्डी'–कार्यालय, अलोपीबाग मार्ग, प्रयाग–२११००६**

साधन-माला

[वैशाख-अङ्क (मई, ९२) से आगे]

(२७)

सिद्धि-चण्डी महा-विद्या

सहस्राक्षर-मन्त्र

वन्दे परागम-विद्यां, सिद्धि-चण्डीं सञ्ज्ञिताम् । महा-सप्तशती-मन्त्र-स्वरूपां सर्व-सिद्धिदाम् ।

विनियोग—ॐ अस्य सर्व-विज्ञान-महा-राज्ञी-सप्तशती रहस्याति-रहस्य-मयी-परा-शक्ति श्रीमदाद्या-भगवती-सिद्धि-चण्डिका-सहस्राक्षरी-महा - विद्या - मन्त्रस्य श्रीमार्कण्डेय-सुमेधा ऋषी, गायत्र्यादि नाना-विधानि छन्दांसि, नव-कोटि-शक्ति-युक्ता-श्रीमदाद्या-भगवती-सिद्धि-चण्डी देवता, श्रीमदाद्या-भगवती-सिद्धि-चण्डी-प्रसादादखिलेष्टार्थे जपे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीमार्कण्डेय-सुमेधा-ऋषिभ्यां नमः शिरसि । गायत्र्यादि-नाना-विध-छन्दोभ्यो नमः मुखे । नव-कोटि-शक्ति-युक्ता-श्रीमदाद्या-भगवती-सिद्धि-चण्डी-देवतायै नमः हृदि । श्रीमदाद्या-भगवती-सिद्धि-चण्डी-प्रसादादखिलेष्टार्थे जप विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे ।

महा-विद्या-न्यास—ॐ श्रीं नमः सहस्रारे । ॐ ह्रीं नमः भाले । क्लीं नमः नेत्र-युगले । ॐ ऐं नमः कर्ण-द्वये । ॐ सौं नमः नासा-पुट-द्वये । ॐ ॐ नमो मुखे । ह्रीं ॐ नमः कण्ठे । ॐ श्रीं नमो हृदये । ॐ ऐं नमो हस्त-युगे । ॐ क्लें नमः उदरे । ॐ सौं नमः कटयां । ॐ ऐं नमो गुह्ये । ॐ क्लीं नमो जङ्घा-युगे । ॐ ह्रीं नमो जानु-द्वये । ॐ श्रीं नमः पादादि-सर्वाङ्गे ।।

ॐ या माया मधु-कैटभ-प्रमथनी, या माहिषोन्मूलनी,
या धूम्रेक्षण-चण्ड-मुण्ड-दलनी, या रक्त-बोजाशनी ।
शक्तिः शुम्भ-निशुम्भ-दैत्य-मथनी, या सिद्ध-लक्ष्मी परा,
सा देवी नव-कोटि-मूर्ति-सहिता, मां पातु विश्वेश्वरी ।।

ॐ ऐं ह्लीं श्रीं ह्यौं श्रीं ह्लीं क्लौं ऐं सौं ॐ ह्लीं श्रीं ऐं क्लीं सौं ऐं क्लीं ह्लीं श्रीं जय जय महा-लक्ष्मि जगदाद्ये बीज-सुरासुर-त्रिभुवन-निदाने दयांकुरे सर्व-तेजो-रूपिणि महा-महा-महिमे महा-महा-रूपिणि महा-महा-माये महा-माया-स्वरूपिणि विरञ्चि-संस्तुते ! विधि-वरदे सच्चिदानन्दे विष्णु-देह-व्रते महा-मोहिनि मधु-कैटभ-जिह्वासिनि नित्य-वरदान-तत्परे ! महा-स्वाध्याय-वासिनि महा-महा-तेज्यधारिणि ! सर्वाधारे सर्व-कारण-करणे अचिन्त्य-रूपे ! इन्द्रादि-निखिल-निर्जर-सेविते ! साम-गानं गायन्ति पूर्णोदय-कारिणि ! विजये जयन्ति अपराजिते सर्व-सुन्दरि रक्तांशुके सूर्य-कोटि-शशांकेन्द्र-कोटि-सुशीतले अग्नि-कोटि-दहन-शीले यम-कोटि-क्रूरे वायु-कोटि-वहन-सुशीतले !

ॐकार-नाद-बिन्दु-रूपिणि निगमागम-मार्ग-दायिनि महिषासुर-निर्दलनि धूम्र-लोचन-वध-परायणे चण्ड-मुण्डादि-सिरच्छेदिनि रक्त - बीजादि-रुधिर - शोषणि रक्त-पान-प्रिये महा-योगिनि भूत-वैताल-भैरवादि-तुष्टि-विधायनि शुम्भ-निशुम्भ-शिरच्छेदिनि ! निखिला-सुर-बल-खादिनि त्रिदश-राज्य-दायिनि सर्व-स्त्री-रत्न-रूपिणि दिव्य-देह-निर्गुणे सगुणे सदसत्-रूप-धारिणि सुर-वरदे भक्त-त्राण-तत्परे ।

वर-वरदे सहस्राक्षरे अयुताक्षरे सप्त-कोटि-चामुण्डा-रूपिणि नव-कोटि-कात्यायनी-रूपे अनेक-लक्षालक्ष-स्वरूपे इन्द्राणि ब्रह्माणि रुद्राणि ईशानि भ्रामरि भीमे नारसिंह्वे ! त्रय-त्रिंशत्-कोटि-दैवते अनन्त-कोटि-ब्रह्माण्ड-नायिके चतुरशीति-मुनि-जन-संस्तुते ! सप्त-कोटि-मन्त्र-स्वरूपे महा-काले रात्रि-प्रकाशे कला-काष्ठादि-रूपिणि चतुर्दश-भुवन-भावा विकारिणि गरुड-गामिनि ! कों-कार हों-कार ह्लीं-कार श्रीं-कार दलेंकार जूं-कार सौं-कार ऐं-कार क्लें-कार ह्लीं-कार ह्लौं-कार हौं-कार-नाना-बीज-कूट-निर्मित-शरीरे नाना-बीज-मन्त्र-राग-विराजते ! सकल-सुन्दरी-गण-सेवते करुणा-रस-कल्लोलिनि कल्प-वृक्षाधिष्ठिते चिन्ता-मणि-द्वीपेऽवस्थिते मणि-मन्दिर-निवासे ! चापिनि खड्गिनि चक्रिणि गदिनि शङ्खिनि पद्मिनि निखिल-भैरवाधिपति-समस्त-योगिनी-परिवृते !

कालि कङ्कालि तोर-तोतले सु-तारे ज्वाला-मुखि छिन्न-मस्तके भुवनेश्वरि ! त्रिपुरे लोक-जननि विष्णु-वक्ष-स्थलालङ्कारिणि ! अजिते अमिते अमराधिपे अनूप-सरिते गर्भ-वासादि दुःखापहारिणि मुक्ति-क्षेमाधिषयनि शिवे शान्ति-कुमारि देवि ! सूक्त-दश-शताक्षरे चण्डि चामुण्डे महा-कालि महा-लक्ष्मि महा-सरस्वति त्रयी-विग्रहे ! प्रसीद-प्रसीद सर्व-मनोरथान् पूरय सर्वारिष्ट-विघ्नं छेदय-छेदय, सर्व-ग्रह-पीडा-ज्वरोग्र-भयं विध्वंसय-विध्वंसय,

सर्व-त्रिभुवन-जातं वशय-वशय, मोक्ष-मार्गं दर्शय-दर्शय, ज्ञान-मार्गं प्रकाशय-प्रकाशय, अज्ञान-तमो नाशय-नाशय, धन-धान्यादि कुरु-कुरु, सर्व-कल्याणानि कल्पय-कल्पय, मां रक्ष-रक्ष, सर्वापद्भ्यो निस्तारय-निस्तारय। मम वज्र-शरीरं साधय-साधय, ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमोऽस्तु ते स्वाहा ।।

(१) ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमो देव्यै महा-देव्यै, शिवायै सततं नमः ।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै, नियताः प्रणताः स्म ताम् ।।

(२) ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सर्व-मङ्गल-माङ्गल्ये, शिवे, सर्वार्थ-साधिके !
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि ! नारायणि नमोऽस्तु ते ।।

(३) सर्व-स्वरूपे सर्वेशे, सर्व-शक्ति-समन्विते !
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि ! दुर्गे देवि ! नमोऽस्तु ते ।।

सिद्धि-चण्डी-महा-मन्त्रं, यः पठेत् प्रयतो नरः । सर्व-सिद्धिमवाप्नोति, सर्वत्र विजयी भवेत् ।।
संग्रामेषु जयेत् शत्रून्, मातङ्गं इव केसरी । वशयेत् सदा निखिलान्, विशेषेण महीपतीन् ।।
त्रिकालं यः पठेन्नित्यं, सर्वैश्वर्य-पुरःसरम् । तस्य नश्यन्ति विघ्नानि, ग्रह-पीडाश्च वारणम् ।।
पराभिचार-शमनं, तीव्र-दारिद्रय-नाशनं । सर्व-कल्याण-निलयं, देव्याः सन्तोष-कारकम् ।।
सहस्रावृत्तितस्तु, देवि ! मनोरथ-समृद्धिदम् । द्वि-सहस्रावृत्तितस्तु, सर्व-सङ्कट-नाशनम् ।।
त्रि-सहस्रावृत्तितस्तु, वशयेद् राज-योषितम् ।
अयुतं प्रपठेद् यस्तु, सर्वत्र चैवातन्द्रितः । स पश्येच्चण्डिकां साक्षात्, वरदान-कृतोद्यमाम् ।।
इदं रहस्यं परमं, गोपनीयं प्रयत्नतः । वाच्यं न कस्यचित् देवि ! विधानमस्थ सुन्दरि ।।
।। श्रीसिद्धि-डामरे शिव-देवी-संवादे सहस्राक्षरं सिद्धि-चण्डी-महा-विद्योत्तमाम् सम्पूर्णम् ।।

[यह **'सहस्राक्षरी मन्त्र'** गढ़वाल क्षेत्र में विचरण-शील परम पूज्य श्री नानतीन बाबा की विलक्षण देन है, जो उनके भक्तों में प्रचलित है। उक्त बाबा सिद्ध पुरुष माने जाते हैं और इस मन्त्र के नियमित पाठ करने से पाठ-कर्ता की अभीष्ट सिद्धि प्राप्त होती है।]

(२८)

श्रीशिव-कवचम्

भगवान् शङ्कर का नाम लेने से ही प्राणियों के सब दुःख दूर हो जाते हैं, फिर उनकी विधि-वत् उपासना करने से क्या नहीं हो सकता ! निश्चय ही भगवान् शिव की पूजा करके लोग अपना सभी प्रकार का हित-साधन कर सकते हैं । इस सम्बन्ध में यहाँ एक '**कवच-स्तोत्र**' उद्धृत किया जा रहा है । इस स्तोत्र के अन्त में इसके वक्ता द्वारा इसका जो माहात्म्य बताया गया है, उसका भावार्थ इस प्रकार है—

ऋषभ ऋषि बोले—मैंने यह वर-दायक शिव का जो कवच कहा है, समस्त प्राणियों की सब बाधाओं को शान्त करनेवाला है और रहस्यों से भरा हुआ है । जो मनुष्य इस उत्तम '**शिव-कवच**' को सदा धारण करता है, उसे भगवान् शम्भु के अनुग्रह से कोई भी भय नहीं होता । चाहे कम आयुवाला हो, चाहे मृत्यु सन्निकट हो अथवा चाहे महान् रोग से पीड़ित हो, इस कवच के प्रताप से वह तुरन्त सुख को प्राप्त करता है और दीर्घ आयु-वाला होता है । सभी प्रकार की दरिद्रताओं को यह शान्त करता है और सब प्रकार से कल्याण करता है । जो इस '**शिव-कवच**' को धारण करता है, वह देवताओं के भी द्वारा पूजित होता है । वह महान् पापों और क्षुद्र पापों के समूहों से छुटकारा पा जाता है तथा देहान्त होने पर '**शिव-कवच**' के प्रभाव से मोक्ष को प्राप्त करता है । हे वत्स ! तुम भी श्रद्धा के साथ मेरे द्वारा दिए इस उत्तम '**शिव-कवच**' को धारण करो । इससे शीघ्र ही निश्चय-पूर्वक तुम्हारा कल्याण होगा ।

पूर्व-पीठिका

अथापरं सर्व-पुराण-गुह्यं, निःशेष-पापौघ-हरं पवित्रम् ।
जय-प्रदं सर्व-विपत्-मोचनं, वक्ष्ये शैवं कवचं हिताय ते ।।१

नमस्कृत्वा महा-देवं, विश्व-व्यापिनमीश्वरम् । वक्ष्ये शिव-मयं वर्म, सर्व-रक्षा-करं नृणाम् ।।२

शुचौ देशे समासीनो, यथा-वत्-कल्पितासनः । जितेन्द्रियो जित-प्राणश्चिन्तयेच्छिवमव्ययम् ।३

हृत्-पुण्डरीकान्तर-सन्निविष्टं, स्व-तेजसा व्याप्त-नभोऽवकाशम् ।
अतीन्द्रियं सूक्ष्ममनन्तमाद्यं, ध्यायेत् परानन्द-मयं महेशम् ।।४

ध्यानावधूताखिल-कर्मबन्धश्चिरं चिदानन्द-निमग्न-चेताः ।
षडक्षर-न्यास-समाहितात्मा, शैवेन कुर्यात् कवचेन रक्षाम् ।।५

मूल-पाठ

विनियोग—ॐ अस्य श्रीशिव-कवच-स्तोत्रस्य श्री ब्रह्मा ऋषिः । अनुष्टुप् छन्दः । श्रीसदा-शिव-रुद्रो देवता । ह्रीं शक्तिः । रं कीलकं । श्रीं ह्रीं क्लीं बीजं । श्रीसदा-शिव-प्रीत्यर्थे शिव कवच-स्तोत्र-पाठे विनियोगः ।

ऋष्यादि - न्यास—श्रीब्रह्मर्षये नमः शिरसि । अनुष्टुप्-छन्दोभ्यो नमः मुखे । श्रीसदा-शिव-रुद्र - देवतायै नमः हृदि । ह्रीं शक्तये नमः नाभौ । रं कीलकाय नमः पादयोः । श्रीं - ह्रीं क्लीं-बीजाय नमः गुह्ये । श्रीसदा-शिव-प्रीत्यर्थे शिव-कवच-स्तोत्र-पाठे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे ।

कर-न्यास—ॐ नमो भगवते ज्वलज्ज्वाला-मालिने ॐ रां सर्व-शक्ति-धाम्ने ईशानात्मने अंगुष्ठाभ्यां नमः । ॐ नमो भगवते ज्वलज्ज्वाला-मालिने ॐ मं रूं अनादि-शक्ति-धाम्ने अघोरात्मने मध्यमाभ्यां नमः । ॐ नमो भगवते ज्वलज्ज्वाला-मालिने ॐ शिं रैं स्वतन्त्र-शक्ति-धाम्ने वाम-देवात्मने अनामिकाभ्यां नमः । ॐ नमो भगवते ज्वलज्ज्वाला-मालिने ॐ वां रौं अतुल-शक्ति-धाम्ने सद्योजातात्मने कनिष्ठाभ्यां नमः । ॐ नमो भगवते ज्वल-ज्ज्वाला-मालिने ॐ यं रः अनादि-शक्ति-धाम्ने सर्वात्मने करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः ।

अङ्ग-न्यास—ॐ नमो भगवते ज्वलज्ज्वाला-मालिने ॐ रां सर्व-शक्ति-धाम्ने ईशानात्मने हृदयाय नमः । ॐ नमो भगवते ज्वलज्ज्वाला-मालिने ॐ मं रूं अनादि-शक्ति-धाम्ने अघो-रात्मने शिरसे स्वाहा । ॐ नमो भगवते ज्वलज्ज्वाला-मालिने ॐ शिं रैं स्वतन्त्र-शक्ति-धाम्ने वाम-देवात्मने शिखायै वषट् । ॐ नमो भगवते ज्वलज्ज्वाला-मालिने ॐ वां रौं अतुल-शक्ति-धाम्ने सद्योजातात्मने कवचाय हुं । ॐ नमो भगवते ज्वलज्ज्वाला-मालिने ॐ यं रः अनादि-शक्ति-धाम्ने सर्वात्मने अस्त्राय फट् ।

ध्यान—वज्र-दंष्ट्रं त्रि-नयनं काल-कण्ठमरिन्दमम् । सहस्र-करमत्युग्रं वन्दे शम्भुमुमा-पतिम् ।।

मां पातु देवोऽखिल-देवतात्मा, संसार-कूपे पतितं गभीरे ।
तन्नाम-दिव्यं वर-मन्त्र-मूलं, धुनोतु मे सर्वमघं हृदिस्थम् ।।१
सर्वत्र मां रक्षतु विश्व-मूर्तिर्ज्योतिर्मयानन्द-घनश्चिदात्मा ।
अणोरणीयानुरु-शक्तिरेकः, स ईश्वरः पातु भयादशेषात् ।।२
यो भू-स्वरूपेण बिभात विश्वं, पायात् स भूमेर्गिरीशोऽष्ट-मूर्तिः ।
योऽपां स्वरूपेण नृणां करोति, सञ्जीवनं सोऽवतु मां जलेभ्यः ।।३

कल्पावसाने भुवनानि दग्ध्वा, सर्वाणि यो नृत्यति भूरि-लीलः ।
स काल-रुद्रोऽवतु मां दवाग्नेर्वात्यादि-भीतेरखिलाच्च तापात् ।।४
प्रदीप्त-विद्युत् कनकावभासो, विद्या-वराभीति-कुठार-पाणिः ।
चतुर्मुखस्तत्पुरुषस्त्रिनेत्रः, प्राच्यां स्थितं रक्षतु मामजस्रम् ।।५
कुठार-खेटांकुश-पाश-शूल-कपाल-ढक्काक्ष - गुणान् दधानः ।
चतुर्मुखो नील-रुचिस्त्रिनेत्रः, पायादघोरो दिशि दक्षिणस्याम् ।।६
कुन्देन्दु - शङ्ख-स्फटिकावभासो, वेदाक्ष-माला-वरदाभयाङ्कः ।
त्र्यक्षश्चतुर्वक्त्र उरु-प्रभावः, सद्योऽधिजातोऽवतु मां प्रतीच्याम् ।।७
वराक्ष-मालाभय-टङ्क-हस्तः, सरोज-किञ्जल्क-समान-वर्णः ।
त्रिलोचनश्चारु-चतुर्मुखो मां, पायादुदीच्यां दिशि वाम-देवः ।।८
वेदाभयेष्टांकुश - पाश-टङ्क-कपाल - ढक्काक्षक - शूल-पाणिः ।
सित-द्युतिः पञ्च-मुखोऽवतात् मामीशान ऊर्ध्वं परम-प्रकाशः ।।९
मूर्द्धानमव्यान् मम चन्द्र-मौलिर्भालं ममाव्यादथ भाल-नेत्रः ।
नेत्रे ममाव्याद् भग-नेत्र-हारी, नासां सदा रक्षतु विश्व-नाथः ।।१०
पायाच्छ्रुती मे श्रुति-गीत-कीर्तिः, कपोलमव्यात् सततं कपाली ।
वक्त्रं सदा रक्षतु पञ्च-वक्त्रो, जिह्वां सदा रक्षतु वेद-जिह्वः ।।११
कण्ठं गिरीशोऽवतु नील-कण्ठः, पाणि-द्वयं पातु पिनाक-पाणिः ।
दोर्मूलमव्यान्मम धर्म-बाहुर्वक्ष-स्थलं दक्ष-मखान्तकोऽव्यात् ।।१२
ममोदरं पातु गिरीन्द्र-धन्वा, मध्यं ममाव्यान्मदनान्त-कारी ।
हेरम्ब-तातो मम पातु नाभिं, पायात् कटिं धूर्जटिरीश्वरो मे ।।१३
ऊरु-द्वयं पातु कुबेर-मित्रो, जानु-द्वयं मे जगदीश्वरोऽव्यात् ।
जङ्घा-युगं पुङ्गव-केतुरव्यात्, पादौ ममाव्यात् सुर-वन्द्य-पादः ।।१४
महेश्वरः पातु दिनादि-यामे, मां मध्य-यामेऽवतु वाम-देवः ।
त्रियम्बकः पातु तृतीय-यामे, वृष-ध्वजः पातु दिनान्त्य-यामे ।।१५
पायान्निशादौ शशि-शेखरो मां, गङ्गा-धरो रक्षतु मां निशीथे ।
गौरी-पतिः पातु निशावसाने, मृत्युञ्जयो रक्षतु सर्व-कालम् ।।१६
अन्तः-स्थितं रक्षतु शङ्करो मां, स्थाणुः सदा पातु बहिः-स्थितं माम् ।
तदन्तरे पातु पतिः पशूनां, सदा-शिवो रक्षतु मां समन्तात् ।।१७

तिष्ठन्तमव्याद् भुवनैक-नाथः, पायाद् व्रजन्तं प्रमथाधि-नाथः ।
वेदान्त-वेद्योऽवतु मां निषण्णं, मामव्ययः पातु शिवः शयानम् ।।१८
मार्गेषु मां रक्षतु नील-कण्ठः, शैलादि-दुर्गेषु पुर-त्रयारिः ।
अरण्य-वासादि-महा-प्रवासे, पायान्मृग-व्याध उदार-शक्तिः ।।१९
कल्पान्तकाटोप-पटु-प्रकोप-स्फुटाट्ट-हासोच्चलिताण्ड - कोशः ।
घोरारि-सेनार्णव-दुर्निवार - महा - भयाद् रक्षतु वीर-भद्रः ।।२०
पत्त्यश्व-मातङ्ग-रथावरूथ - सहस्र - लक्षायुत-कोटि-भीषणम् ।
अक्षौहिणीनां शतमाततायिनाश्छिन्द्यान्मृडो घोर-कुठार-धारया ।।२१
निहन्तु दस्यून् प्रलयानिलार्च्चिज्ज्वलन् त्रिशूलं त्रिपुरान्तकस्य ।
शार्दूल-सिंहर्क्ष-वृकादि-हिंस्रान्, सन्त्रासयत्वीश-धनुः पिनाकः ।।२२
दुःस्वप्न-दुःशकुन-दुर्गति-दौर्मनस्य-दुर्भिक्ष-दुर्व्यसन-दुःसह-दुर्यशांसि ।
उत्पात-ताप-विष-भीतिमसद्-गुहार्ति-व्याधींश्च नाशयतु मे जगतामधीशः ।।२३

ॐ नमो भगवते सदा-शिवाय सकल-तत्त्वात्मकाय सर्व-मन्त्र-रूपाय सर्व-यन्त्राधिष्ठिताय सर्व-तन्त्र-रूपाय सर्व-तत्त्व-विदूराय ब्रह्म-रुद्रावतारिणे नील-कण्ठाय पार्वती-मनोहर-प्रियाय सोम-सूर्याग्नि-लोचनाय भस्मोद्धूलित-विग्रहाय महा-मणि-मुकुट-धारणाय माणिक्य-भूषणाय सृष्टि-स्थिति-प्रलय-काल-रौद्रावताराय दक्षाध्वर-ध्वंसकाय महा-काल-भेदनाय मूलाधारैक-निलयाय तत्त्वातीताय गङ्गा-धराय सर्व-देवाधि-देवाय षडाश्रयाय वेदान्त-साराय ।

त्रिवर्ग-साधनायानन्त-कोटि-ब्रह्माण्ड-नायकायानन्त-वासुकि-तक्षक-कर्कोटक-शङ्ख-कुलिक-पद्म-महा-पद्मेत्यष्ट-महा-नाग-कुल-भूषणाय प्रणव-स्वरूपाय चिदाकाशायाकाश-दिक्-स्वरूपाय ग्रह-नक्षत्र-मालिने सकलाय कलङ्क-रहिताय सकल-लोकैक-कर्त्रे सकल-लोकैक-संहर्त्रे सकल-लोकैक-गुरवे सकल-लोकैक-साक्षिणे सकल-लोकैक-वर-प्रदाय सकल-लोकैक-शङ्कराय शशाङ्क-शेखराय शाश्वत-निजावासाय निराभासाय निरामयाय निर्मलाय निर्लोभाय निर्मदाय निश्चिन्ताय निरहङ्काराय निरंकुशाय निष्कलङ्काय निर्गुणाय निष्कामाय निरुपप्लवाय निरवद्याय निरन्तराय निष्कारणाय निरातङ्काय निष्प्रपञ्चाय निस्सङ्गाय निर्द्वन्द्वाय निराधाराय नीरागाय निष्क्रोधाय निर्मलाय निष्पापाय निर्भयाय निर्विकल्पाय निर्भेदाय निष्क्रियाय निस्तुलाय निःसंशाय निरञ्जनाय निरुपम-विभवाय नित्य-शुद्ध-बुद्धि-परिपूर्ण-सच्चिदानन्दाद्वयाय परम-शान्त-स्वरूपाय तेजो-रूपाय तेजो-मयाय ।

जय जय रुद्र महा-रौद्र महावतार महा-भैरव काल-भैरव कपाल-माला-धर खट्वाङ्ग-खड्ग-चर्म- पाशांकुश-डमरु-शूल-चाप-बाण-गदा-शक्ति-भिन्दिपाल-तोमर-मुसल -मुद्गर-पाश-परिघ-भुशुण्डी-शतघ्नी-चक्राद्यायुध भीषण-कर सहस्र-मुख दंष्ट्रा कराल-वदन विकटाट्ट-हास-विस्फारित ब्रह्माण्ड-मण्डल नागेन्द्र-कुण्डल नागेन्द्र-वलय नागेन्द्र-चर्म-धर मृत्युञ्जय त्र्यम्बक त्रिपुरान्तक विश्व-रूप विरूपाक्ष विश्वेश्वर वृषभ-वाहन विश्वतोमुख !

सर्वतो रक्ष, रक्ष । मा ज्वल ज्वल । महा-मृत्युमप-मृत्यु-भयं नाशय नाशय । चोर-भय-मुत्सादयोत्सादय । विष-सर्प-भयं शमय शमय । चोरान् मारय मारय । मम शत्रूनुच्चा-टयोच्चाटय । त्रिशूलेन विदारय विदारय । कुठारेण भिन्धि भिन्धि । खड्गेन छिन्धि छिन्धि । खट्वाङ्गेन विपोथय विपोथय । मुसलेन निष्पेषय निष्पेषय । बाणैः सन्ताडय सन्ताडय । रक्षांसि भीषय भीषय । अशेष-भूतानि विद्रावय विद्रावय । कूष्माण्ड-वेताल-मारी-गण-ब्रह्म-राक्षस-गणान् सन्त्रासय सन्त्रासय । ममाभयं कुरु कुरु । वित्रस्तं मामाश्वास-याश्वासय । नरक-महा-भयान्मामुद्धरोद्धर । सञ्जीवय सञ्जीवय । क्षुत्-तृड्भ्यां मामाप्याययाप्यायय । दुःखातुरं मामानन्दयानन्दय । शिव-कवचेन मामाच्छादयाच्छादय । मृत्युञ्जय, त्र्यम्बक, सदाशिव ! नमस्ते ।

।। फल-श्रुति ।।

।। ऋषभ उवाच ।।

इत्येतत् कवचं शैवं, वरदं व्याहृतं मया ।
सर्व - बाधा - प्रशमनं, रहस्यं सर्व - देहिनाम् ।।२४
यः सदा धारयेन्मर्त्यः, शैवं कवचमुत्तमम् ।
न तस्य जायते क्वापि, भयं शम्भोरनुग्रहात् ।।२५
क्षीणायुः प्राप्त - मृत्युर्वा, महा-रोग-हतोऽपि वा ।
सद्यः सुखमवाप्नोति, दीर्घमायुश्च विन्दति ।।२६
सर्व - दारिद्रय - शमनं, सौमङ्गल्य-विवर्द्धनम् ।
यो धत्ते कवचं शैवं, स देवैरपि पूज्यते ।।२७
महा-पातक - सङ्घातैर्मुच्यते चोप - पातकैः ।
देहान्ते मुक्तिमाप्नोति, शिव - वर्मानुभावतः ।।२८
त्वमपि श्रद्धया वत्स ! शैवं कवचमुत्तमम् ।
धारयस्व मया दत्तं, श्रेयो ह्यवाप्स्यसि ।।२९

(२९)

क्लीं-बीज का अनुभूत प्रयोग

एक फुट व्यास के गोल सफेद कागज पर पेंसिल से लगभग चार अंगुल ऊँचा **'क्लीं'** बीजाक्षर लिखिए। कागज के खाली भाग में कामनानुसार रङ्ग भरें। जैसे **'लक्ष्मी-प्राप्ति'** के लिए पीला, **'आकर्षण'** के लिए लाल, सभी तरह की **'बीमारी'** के लिए हरा रङ्ग।

प्रातःकाल, प्रति-दिन, निश्चित समय पर, शान्त अवस्था में उक्त आकृति अपने सामने या दीवार पर टाँग कर, लगभग दो फुट दूर बैठिए। १५ मिनट से आरम्भ कर १ घण्टे तक, आकृति पर स्थिर दृष्टि रखने का अभ्यास कीजिए।

'क्लीं' बीज-मन्त्र को ध्यान से देख कर, आँखें बन्द कर यही बीज-मन्त्र अपने कपाल पर देखिए। प्रारम्भ में न दिखे, तो घबराइए नहीं। धीरे-धीरे अभ्यास करें।

सभी तरह के बाहरी विचारों व मानसिक तनाव को दूर करने के लिए **'ऐं क्लीं नमः'** का जप करिए। धैर्य के साथ ४-६ महीने करने पर विचारों पर नियन्त्रण होकर सभी मनो-कामनाएँ पूर्ण होंगी। द्वेष-बुद्धि से किसी के विरुद्ध यह प्रयोग न करें।

यह प्रयोग **'त्राटक'** नहीं है। हमारा अनुभूत प्रयोग है। आँखों के बन्द करने पर, जब बाहर अङ्कित **'क्लीं'** बीज का दर्शन होने लगे, तब समझिए कि प्रयोग सिद्ध हो रहा है। आहार-विहार का संयम रखते हुए, गुरु-देव की अनुमति से नित्य जप करने से अभीष्ट की सिद्धि निश्चय ही मिलेगी। —**श्री नर्मदाप्रसाद पुरोहित, देवास** (म० प्र०)

(३०)

सिद्ध लक्ष्मी-प्रार्थना

'सिद्धि' का प्रथम लक्षण 'विश्वास' है, द्वितीय 'श्रद्धा'। 'श्रद्धा', 'विश्वास' से 'मन्त्र'-साधना अवश्य सफल होती है। **भगवती कमला की शास्त्रीय प्रार्थना**—'श्री श्रीविद्यार्णव तन्त्र' में द्वा-विंशः श्वास में **'लक्ष्मी-हृदय'** के प्रसङ्ग में बतलाई हुई एक **सिद्ध-क्रिया** यहाँ मैं आपके सम्मुख रख रहा हूँ। इससे सरल प्रक्रिया संसार में दूसरी कोई नहीं है। भाव-पूर्वक यदि सर्वथा कर्तुमकर्तुमपाकर्तुं समर्थ श्रीमहा-राणी कमला से माँगेंगे, तो भगवती बड़ी कृपालु हैं। रात्रि को एकान्त में १० से १ के बीच में, बच्चे की भाँति रो-रोकर

एक-एक शब्द को पढ़ते हुए, ध्यान देकर सर्वत्र विराजमान सर्व-साक्षिणी, सर्व-कल्याण-कर्त्री सर्वेश्वरी श्रीकमला से यह प्रार्थना करे–

सुवर्ण-वृद्धि कुरु मे गृहे श्रीः । कल्याण-वृद्धि कुरु मे गृहे श्रीः ।
विभूति-वृद्धि कुरु मे गृहे श्रीः । सौभाग्य-वृद्धि कुरु मे गृहे श्रीः ।
श्रीशाङ्घ्रि-भक्ति हरदास-दास्यं, प्रसन्न - मन्त्रार्थ - दृढैक-निष्ठाम् ।
गुरोः स्मृतिं निर्मल-बोध-बुद्धि, प्रदेहि मे देहि परं पदं श्रीः ।।१
पृथ्वी-पतित्वं पुरुषोत्तमत्वं, विभूति-वासं विविधर्द्धि-सिद्धिम् ।
सम्पूर्ण-सिद्धि बहु-वर्ष-भोग्यां, प्रदेहि मे देहि पुनः पुनस्त्वम् ।।२
वागर्थ-सिद्धि बहु-लोक-वश्यं, वयः स्थिरत्वं ललना-सुभोगम् ।
पौत्रादि-लब्धिं सकलार्थ-सिद्धि, प्रदेहि मे भार्गवि ! जन्म-जन्मनि ।।३

(३१)

श्री कार्तवीर्यार्जुन दर्पण-प्रयोग

घर से भागे हुए व्यक्ति के बारे में यदि पता न चल रहा हो, तब उसकी स्थिति व परिस्थिति जानने के लिए यह प्रयोग किया जा सकता है। वैसे तो इस प्रयोग के द्वारा चोरी गई वस्तुओं तथा उनके चोरों का भी ज्ञान पाया जा सकता है, परन्तु क्योंकि यह प्रयोग मँहगा तथा श्रम-साध्य है, अतः अत्यन्त जटिल परिस्थिति में ही, जब और कोई उपाय काम न आए, तभी इस '**दर्पण-प्रयोग**' को करना चाहिए।

(१) शुभ मुहूर्त में, शुद्ध स्थान (शुभ स्थान) में, शुद्ध होकर बैठ जाएँ (प्रयोग का स्थान निर्वात, पर्याप्त खुला, हवादार, रोशन-दान, झरोखा आदि से युक्त होना चाहिए, ताकि 'दीपक' बुझे नहीं तथा दीपकों का धुँआ बाहर निकलता रहे।) विधि-पूर्वक इच्छित कार्य की सफलता हेतु सङ्कल्प एवं श्रीगणपत्यादि पूजन करें।

(२) साधक स्वयं मध्य-भाग में बैठे। अपने सामने काँसे/ताँबे को थाली/कटोरे में तैल भर कर रक्खे। दूसरा सहायक व्यक्ति, साधक के चारों तरफ गोल घेरे की आकृति में, एक हजार मिट्टी के बने 'दीपक', इस प्रकार रक्खे कि सभी दीपकों के मुख साधक

की तरफ रहें । साधक का स्वयं का मुख, 'उत्तर-दिशा' की तरफ होगा तथा उसके दाहिने हाथ 'प्रधान दीपक' रहेगा—ताकि 'प्रधान दीपक' का मुख 'पश्चिम' की ओर रहे ।

(२) साधक के वस्त्र, सहायक के वस्त्र, पूजा-सामग्री—सभी लाल होनी चाहिए । लाल चन्दन या गहरे लाल मूँगे की माला, सरसों के तेल में रोली मिली बत्तियों की रुई या तो लाल रँगी या मौली-निर्मित होनी चाहिए । कमरे की दीवार या परदे लाल रङ्ग के हों, तो अच्छा रहेगा । सहयोगी व्यक्ति तथा सहायक का यज्ञोपवीत भी लाल रङ्ग का होना चाहिए । 'दीपक' मिट्टी के तथा लाल रङ्ग के अतिरिक्त अन्य किसी रङ्ग का दाग/धब्बा न होना चाहिए । दीपकों को दूर-दूर रक्खें ताकि यदि किसी दीपक में तेल कम हो जाए, तो उसमें तेल डालने के लिए या बत्ती ऊँची करने के लिए सहयोगी व्यक्ति के आने-जाने के लिए पर्याप्त स्थान रहे । बत्तियाँ बड़ी प्रयोग करे, क्योंकि दूसरी बत्ती नहीं प्रयोग की जा सकती है ।

(४) सभी 'दीपक' जला कर साधक निम्न 'मन्त्र' का दस सहस्त्र जप करे—

"ॐ नमो भगवते श्रीकार्तवीर्यार्जुनाय सर्व-दुष्टान्तकाय तपोबल-पराक्रम-परिपालित-सप्त-द्वीपाय, सर्व-राजन्य-चूडामणये, सर्व-शक्ति-मते, सहस्त्र-बाहवे हुं फट् (मम) अभिलषितं दर्शय-दर्शय स्वाहा ।"

(५) जब तक दस सहस्त्र जप पूरा न हो जाए, तब तक 'आसन' से उठें नहीं । न कोई दीपक बुझने दें । मन व सभी इन्द्रियाँ 'जप-काल' में एकाग्र रक्खें ।

विशेष—(१) यदि भागे हुए व्यक्ति का चित्र 'प्रयोग' के स्थान पर रख सकें, तो अच्छा रहेगा ।

(२) यदि साधक को लगे कि 'मन्त्र' बड़ा है तथा एकासन पर पूरा 'जप' सम्भव नहीं है, तो सहयोगी रखे जा सकते हैं । सहयोगी एक या कई हों परन्तु सच्चरित्र व शुद्ध उच्चारण करनेवाले होने चाहिए । सहयोगियों के वस्त्रादि का विधान साधक की तरह ही रहेगा ।

(३) 'जप' पूरा होने पर, अभिलषित व्यक्ति की हालत व स्थान आदि सामने रखे हुए तैल में प्रत्यक्ष चित्र के समान स्पष्ट हो जाते हैं ।

(३२)

अनुभूत मन्त्र-प्रयोग

आजकल महार्घता के युग में किसी व्यक्ति के पास इतना समय नहीं है कि 'कलौ चतुर्गुणं प्रोक्तं' के अनुसार पाँच लाख का 'जप' कर सकें। अतः यहाँ पुरश्चरण की एक ऐसी सरल विधि प्रस्तुत है, जिसके द्वारा 'मन्त्र' सिद्ध कर साधक अभीष्ट सिद्धि प्राप्त कर सकते हैं।

(१) साधक को चाहिए कि शुद्ध वस्त्रादि पहनकर 'देवता' के सान्निध्य में कुशासन, मृग-चर्म अथवा ऊर्णासन पर हाथ जोड़कर बैठे। अपने सम्मुख एक 'दीपक' जलाए। फिर '१ ॐ भूः आत्म-तत्वाय स्वाहा, २ ॐ भुवः विद्या-तत्त्वाय स्वाहा, ३ ॐ स्वः शिव-तत्त्वाय स्वाहा, ४ ॐ भूर्भुवः स्वः सर्व - तत्त्वाय स्वाहा' कहकर चार बार 'आचमन' करे।

(२) 'गायत्री'-मन्त्र से अथवा 'मूल'-मन्त्र से तीन बार 'प्राणायाम' करे। फिर 'आसन-शुद्धि' हेतु—'ॐ पृथिवीति मन्त्रस्य मेरु-पृष्ठ ऋषिः, सुतलं छन्दः, कूर्मो देवता, आसन-पवित्रीकरणे विनियोगः' कहकर 'जल' छोड़ दे।

पुनः 'आसन' के नीचे रक्त-चन्दन से एक 'त्रिकोण' बनावे। इस 'त्रिकोण' पर ॐ आधार-शक्ति-कमलासनाय नमः कहकर जल-गन्ध-अक्षत-पुष्प चढ़ावे और 'पृथ्वी' माता की प्रार्थना करे—ॐ पृथ्वि ! त्वया धृता लोका, देवि ! त्वं विष्णु-धारिता। त्वं च धारय मां देवि ! पवित्रं कुरु चासनम्॥

(४) फिर 'भूतोत्सारण' करे—अप-सर्पन्तु ते भूता, ये भूता भुवि संस्थिता। ये भूता विघ्न-कर्त्तारस्ते गच्छन्तु शिवाज्ञया॥ अब 'भैरव' को नमस्कार कर 'पुरश्चरण' हेतु 'आज्ञा' प्राप्त करे—तीक्ष्ण-दंष्ट्र महा-काय, कल्पान्त-दहनोपम ! भैरवाय नमस्तुभ्यं, अनुज्ञां दातुमर्हसि॥

(५) इसके बाद वाम पैर से पृथिवी पर तीन बार प्रहार करे तथा हाथ धोकर 'दीपक' के सम्मुख—'ॐ कर्म-साक्षिणे दीप-देवतायै नमः' कहकर गन्ध-अक्षत-पुष्प चढ़ाए। पुनः 'प्रार्थना' करे—भो दीप ! ब्रह्म-रूपस्त्वं, ज्योतिषां प्रभुरव्ययः। यावत् कर्म-समाप्तिः स्यात्, तावत् त्वं सु-स्थिरो भव॥

(६) तदनन्तर '**सङ्कल्प**' पढ़कर गोत्रोच्चारण—**अमुक-गोत्रोत्पन्नो अमुक-शर्मा, वर्मा, अमुक-मन्त्र-सिद्धि-कामनया होलिका-पर्वणि, दीपावलि-पर्वणि वा सहस्रावृत्ति-मन्त्र-जपमहं करिष्ये**—ऐसा कहकर 'जल' डाल दे।

(७) पुनः '**माला-संस्कार**' करे। रुद्राक्ष, तुलसी, रक्त-चन्दन, कमल-गट्टा या स्फटिक की 'माला' को जल से धोकर, गन्ध-अक्षत चढ़ाकर, धूप देकर 'प्रार्थना' करे—**मां माले माले महा-माये, सर्व-शक्ति-स्वरूपिणि ! चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तं, तस्मान्मां सिद्धिदा भव ॥**

माला गो-मुखी में रखकर '**मन्त्र**'-**जप** करना चाहिए। यदि मन्त्रों का विनियोग, न्यास, ध्यान हो, तो वह पहिले करे। तब '**माला**'-**संस्कार** कर 'जप' करे।

पुरश्चरण की दूसरी विधि यह है कि **सूर्य-चन्द्र-ग्रहण** के पर्व-काल में, ग्रहण पड़ने से पूर्व उपर्युक्त विधि से दीप-प्रज्वालन, आसन-शोधन, भूतोत्सारण, भैरव-आज्ञा-प्राप्ति, दीप-प्रार्थना कर '**सङ्कल्प**' करे—'**सङ्कल्प**' में गोत्रोच्चारण के बाद यदि सूर्य-ग्रहण हो, तो '**राहु-ग्रस्ते दिवाकरे ग्रासादि-मोक्ष-पर्यन्तं अमुक-मन्त्र-सिद्धि-कामः तस्य मन्त्रस्य जप-रूप-पुरश्चरणमहं करिष्ये**' कहे। यदि '**चन्द्र-ग्रहण**' हो, तो '**राहु-ग्रस्ते निशाकरे ग्रासादि-मोक्ष-पर्यन्तं अमुक-मन्त्र-सिद्धि-कामः तस्य मन्त्रस्य जप-रूप-पुरश्चरणमहं करिष्ये**' कहे।

स्थानीय ग्रहण-काल से पाँच मिनट पूर्व '**सङ्कल्प**' पढ़कर 'जल' छोड़े तथा 'मन्त्र'-जप प्रारम्भ करे। 'ग्रहण'-मोक्ष होने के बाद भी पाँच मिनट 'मन्त्र'-जप करे। 'जप'-समाप्ति पर '**अनेन मत्-कृतेन जपेन मन्त्र-सिद्धिरस्तु**' कहकर 'जल' छोड़े। फिर यदि सम्भव हो, तो उसी दिन 'जप' का दशांश '**हवन**' तिलाज्य से करे। 'हवन' का दशांश '**तर्पण**', 'तर्पण' का दशांश '**मार्जन**' तथा न्यूनतम एक 'ब्राह्मण' को भोजन कराए।

विशेष—ग्रहण-कालीन पुरश्चरण के दिन साधक के चतुर्थ, अष्टम एवं द्वादश चन्द्रमा न होने चाहिए।

(३३)

गर्भ-धारण-मन्त्र

ॐ नमो भगवति पद्मे ह्लीं ह्लीं क्लीं क्लूं व्रीं ठँ ठँ ठँ अमुक्या आवल्य हानाय स्वाहा।

विधि—उपर्युक्त विधि से होलिका, दीपावली आदि 'पर्व' अथवा 'ग्रहण-काल' में पुरश्चरण करने के पश्चात्, उक्त मन्त्र को हरे नारियल अथवा बिजौरे के फल पर १०८ बार पढ़ना चाहिए। 'मन्त्र' में 'अमुक्या' के स्थान पर स्त्री का 'षष्ठ्यन्त' नाम पढ़ना चाहिए। जैसे किसी स्त्री का नाम सरस्वती, यमुना, या गङ्गा है, तो **सरस्वत्याः, यमुनायाः,**

गङ्गायाः पढ़ना चाहिए। इस प्रकार अभिमन्त्रित फल को स्त्री को मासिक-धर्म की शुद्धि के बाद देना चाहिए। स्त्रो द्वारा अभिमन्त्रित फल के खाने पर गर्भ-धारण हो जाता है। हरा नारियल दो-चार दिन में भी खाया जा सकता है।

(३४)

जिह्वा-कीलन-प्रयोग

ॐ नमो-आकाश-पूरिणि पाताल-पूरिणि मधु-मांस-आहार-भक्षिणि अमुकस्य जिह्वां कीलय-कीलय स्वाहा ॥

विधि—उपर्युक्त विधि से 'पर्व'-काल या 'ग्रहण'-काल में पहले उक्त 'मन्त्र' का पुरश्चरण करे। फिर आक के पत्ते पर, चिता के कोयले की स्याही से, लोहे की लेखनी से उक्त 'मन्त्र' लिखे। 'अमुक' के स्थान पर साध्य का षष्ठयन्त-नाम लिखकर, उसके ऊपर लोहे की कील गाड़ दे। तब २१ बार उक्त 'मन्त्र'-जप करके पत्ते को धरती में गाड़ दे। इस प्रकार ७ दिन तक करे, तो शत्रु वकील आदि का जिह्वा-कीलन हो।

(३५)

लक्ष्मी-प्राप्ति का मन्त्र

ॐ नमो मणि-भद्राय आयुध-धराय मम लक्ष्मी-वांच्छितं पूरय-पूरय ऐं ह्रीं क्लीं ह्यौं मणि-भद्राय नमः।

विधि—उपर्युक्त विधि से उक्त 'मन्त्र' का पुरश्चरण 'पर्व'-काल या 'ग्रहण'-काल में करे। फिर प्रयोग हेतु किसी एकान्त स्थान का चयन करे। इस एकान्त स्थान को शुभ दिन गाय के गोबर आदि से लीप कर स्वच्छ करे। इस स्वच्छ स्थान में लकड़ी के पटरे के ऊपर एक गड़गड़ा नारियल रक्खे। नारियल पर केशर-सिन्दूर से तीन टीके लगाए। फिर '**ॐ मणि-भद्राय नमः**' कह कर पञ्चोपचार पूजन करे। यथा—**ॐ मणि-भद्राय नमः गन्धं समर्पयामि। ॐ मणि-भद्राय नमः पुष्पं समर्पयामि। ॐ मणि-भद्राय नमः धूपं घ्रापयामि। ॐ मणि-भद्राय नमः दीपं दर्शयामि। ॐ मणि-भद्राय नमः नैवेद्यं समर्पयामि।**

पञ्चोपचार-पूजन करने के बाद उक्त 'मन्त्र' का १००० बार जप करे। छः मास प्रति-दिन इस प्रकार जप करने से देवता प्रत्यक्ष दर्शन देते हैं, अभीष्ट की पूर्ति करते हैं।

विशेष—इस मन्त्र को हमने एक शिष्य से कराया था। एक मास बाद ही उसने सट्टा वताया। वह अङ्क आ गया। उसे धन प्राप्त हुआ, किन्तु देवता क्रुद्ध हो गया।

रात्रि में भयानक रूप दिखाकर बोला कि 'अब किसी को मत बताना।' शिष्य हमारा आत्म-रक्षा कर लेता था। इस कारण वह विचलित नहीं हुआ। उसकी लड़की ५ वर्ष की लेट रही थी, उस पर प्रहार कर दिया। ७ दिन में ठीक हुई। कहने का तात्पर्य यह है कि ये बड़े उग्र देव हैं। बड़े संयम एवं नियम-पूर्वक अनुष्ठान करना चाहिए। एक बार भोजन, पृथ्वी में अथवा तखत पर लेटना, क्रोध न करना, ब्रह्मचर्य से रहना, क्षौर न कराना तथा दूसरे का अन्न आदि न ग्रहण करना चाहिए।

(३६)

भूत-प्रेत-बाधा-निवारण प्रयोग

ॐ ऐं ह्लीं श्रीं ॐ ह्लीं क्लीं खं भूतेश ह्लीं ह्लां खड्ग-रावणाय नमः।

विधि—पहले उपर्युक्त विधि से उक्त 'मन्त्र' का 'पुरश्चरण' करे। फिर पीली सरसों को इस मन्त्र की १०८ आवृत्ति से अभिमन्त्रित करे। तब जिस स्त्री या पुरुष पर बाधा हो, उस पर उक्त 'मन्त्र' पढ़ता हुआ ७ बार अभिमन्त्रित सरसों मारे। इससे व्यक्ति आवेश में आकर बोलने लगता है और अपनी इच्छानुसार माँगता है। ऐसे समय साधक को चाहिए कि उसके घरवालों से उस वस्तु को प्रदान कराए।

विशेष—हमारे यहाँ के प्राचीन तान्त्रिक इसी 'मन्त्र' से भूत-बाधा दूर करते हैं। साधक को सावधान रहना चाहिए। आवेश में आकर वह प्रहार भी कर देता है। ऐसा मैंने कई बार देखा है। हमारे ससुर जी बहुत बड़े तान्त्रिक थे। उन्होंने मुझे मना कर दिया था कि इस 'प्रयोग' को तुम मत करना। ऐसा मैंने देखा है कि भूत-बाधा निवृत्त करनेवालों के लड़के मर जाते हैं। अतएव विरक्त साधक को ही यह परोपकार करना चाहिए। गृहस्थ साधक न करे।

गृहस्थ साधक को चाहिए कि नव-रात्रों की महाष्टमी के दिन, 'नवार्ण मन्त्र' अथवा 'भैरव मन्त्र' अथवा 'खड्ग रावण मन्त्र' को, 'भोज-पत्र' पर, 'रक्त'-चन्दन से अनार की कलम से लिखकर, दो दिन अधिवास करके गन्धाक्षत से पूजन करे एवं दशमी के दिन 'भूत-प्रेत'-बाधा वाले व्यक्ति को दे दें। वह व्यक्ति यथा-सम्भव सोने, चाँदी अथवा ताँबे के ताबीज में रखकर, गण्डा में उसको पुवाकर, अच्छे चन्द्रमा जिस दिन हों, उस दिन गो-दुग्ध अथवा गङ्गा-जल से 'तावीज' को धोकर, गन्ध-अक्षत-पुष्प चढ़ाकर, धूप देकर 'कण्ठ' में धारण कर ले, तो भूत-बाधा से त्राण होता है। मथुरा के तान्त्रिक इस विधि को भी अपनाते रहे हैं। मैं भी इसी रीति का अनुसरण करता हूँ। **—पं० लक्ष्मणदत्त चतुर्वेदी**

(३७)

युवकों के विवाहार्थ अनुभूत प्रयोग

(१) स्नान करने के पश्चात्–ॐ श्री विश्वावसु गन्धर्वराजाय इदं जलाञ्जलिं समर्पयामि नमः' यह मन्त्र पढ़कर सात जलाञ्जलियाँ दे।

(२) जलाञ्जलियाँ देने के बाद निम्न मन्त्र का १०८ बार जप करें––ॐ विश्वावसुर्नाम गन्धर्वः कन्यकानामधिपतिः, सुरूपां सालङ्कारां देहि मे नमस्तस्मै विश्वावसवे स्वाहा !' नित्य एक मास तक इस प्रयोग को करने से अच्छे मनोनुकूल घराने में विवाह हो जाता है। यदि सदैव इसका प्रयोग किया जाए, तो यह श्रेष्ठ स्त्री-वशीकरण का भी प्रयोग है।

(३८)

कन्याओं के विवाहार्थ अनुभूत प्रयोग

कात्यायनि महामाये महा-योगिन्यधीश्वरि, अमुक-सुतं अमुकं देवि ! पतिं मे कुरु ते नमः।

भगवती कात्यायनी का पञ्चोपचार (१ गन्ध-अक्षत, २ पुष्प, ३ धूप, ४ दीप, ५ नैवेद्य) से पूजन करके उपर्युक्त मन्त्र का १०,००० दस हजार जप तथा दशांश हवन, तर्पण तथा कन्या-भोजन कराने से कुमारियाँ इच्छित वर प्राप्त कर सकती हैं। 'अमुक' के स्थान पर साध्य का नामोल्लेख करना चाहिए। यदि यही कार्य भगवती की स्वयं की इच्छा से कराना हो, तो 'मन्त्र' को मूल रूप में जपें। 'मूल-मन्त्र' यह है–

'कात्यायनि महा-माये महा-योगिन्यधीश्वरि ! नन्द-गोप-सुतं देवि ! पतिं मे कुरु ते नमः।'

इसका प्रयोग द्वापर में गोपियों ने श्रीकृष्ण जी को पति-रूप में प्राप्त करने के लिए किया था। **'नन्द-गोप-सुतं'** पद को आवश्यकतानुसार परिवर्तित किया जा सकता है।

(३९)

सर्व-कामना-पूर्ति प्रयोग

आर्या दुर्गा वेद - गर्भा, अम्बिका भद्र - काल्यपि !
भद्रा क्षेम्या क्षेम-करी, नैक- बाहुर्नमामि ताम् ॥

इस नामावली को तीनों सन्ध्याओं में नित्य पढ़ने से सभी कामनाएँ पूरी होती हैं।

—श्री भैरवानन्द, सागर (म० प्र०)

प्रभु का स्मरण क्यों ?

☐ दुनिया में मनुष्य क्या चाहता है ? **'सुख'** । सब कोई यही चाहते हैं कि हमें प्रत्येक प्रकार का **'सुख'** मिले । किसी ने सुन्दर स्त्री, तो किसी ने द्रव्य और किसी ने वैभव और सन्तानों में **'सुख'** माना है ।

अन्न आदि स्थूल पदार्थों से शरीर में रक्त बनता है और उसके द्वारा मन के ऊपर स्थूल का प्रभाव पड़ता है, इस कारण स्थूल अर्थात् स्त्री, पुत्र, द्रव्य आदि में **'सुख'** मानकर 'मन' उनके पीछे भटकता है । मन जिन अणुओं का बना है, वे अणु और प्रकृति के प्रवाह के अणु दोनों एक हैं, इसलिए भी प्रवाह में दिखनेवाले स्त्री, द्रव्य, सन्तान आदि में **'सुख'** मानकर 'मन' उनके पीछे पड़ता है । माननेवाली शक्ति को 'मन' कहते हैं ।

'मन' को जो बाह्य दर्शन होता है, उसको सत्य मानकर **'मन'** उसमें **'सुख'**—आराम ढूँढ़ता है, पर उसमें वह मिलता नहीं है ।

'मन' जिसके संयोग में 'सुख' मानता है, उसका वियोग जरूर होगा और इससे 'दुःख' भी होगा । प्रकृति के प्रवाह में सभी गति - युक्त हैं । 'मन' जिस विन्दु को पकड़ने जाएगा, उस विंदु के हाथ में आने से **'सुख'** का अनुभव होगा, परन्तु उस विन्दु के गति - युक्त होने से वह जब हट जाएगा, तब 'मन' को फिर **'दुःख'** होगा, क्योंकि उस विंदु में 'मन' ममत्व स्थापित कर चुकता है । संक्षेप में हम जिस वस्तु में **'सुख'** मानेंगे, उस वस्तु से अन्त तक 'सुख' मिलेगा, यह नहीं कह सकते क्योंकि प्रत्येक वस्तु गति - युक्त होने से प्रति - क्षण बदलती रहती है ।

जैसे रात के बाद दिन, जन्म के बाद मृत्यु, लाभ के बाद हानि होती है, वैसे ही **'सुख'** के बाद 'दुःख' भी आ सकता है । मनुष्य को 'दुःख' बुरा लगता है, पर यह द्वैत (सुख - दुःख) हमेशा से साथ- साथ है और रहेगा ।

☐ महमूद गजनवी ने कई बार हिन्दुस्तान को लूटा । केवल सोमनाथ जी के ही मन्दिर में से ६०० मन सोना, २००० मन चाँदी और तीन करोड़ रुपये के जवाहर लूटकर वह ले गया था । जब उसके मरने का समय आया, तब उसने लूटा हुआ माल अपने सामने रखवाया और उसे देखकर वह रोने लगा । उसने कहा कि **'हाय, जिस वस्तु के कारण मैंने हजारों मनुष्यों का रक्त बहाया, उसे जैसा - का - तैसा छोड़कर मैं खाली हाथ जा रहा हूँ ।'** द्रव्य में **'सुख'** माननेवाले को इस तरह अन्त में उससे 'दुःख' हुआ ।

ऐसे ही स्त्री, पुत्र या पति, चाहे कितना भी एक दूसरे के मन के अनुसार चलते हों और एक दूसरे को सुखी रखते हों, पर एक दिन ऐसा होगा ही कि वह हमको छोड़ देगा या हम उसको छोड़ देंगे । उस समय दोनों को जरूर **'दुःख'** होगा ।

☐ **भोग में 'सुख'** माननेवाले को भले ही भोग में **'सुख'** मिलता हो, पर भोग को भोग लेने के बाद, वह फिर जैसा - का - तैसा हो जाता है । 'मन' क्षण - क्षण नए - नए भोगों के पीछे दौड़ता रहता है, पर किसी में उसको **'सुख'** का अनुभव सदैव नहीं हो सकता । भगवान् श्री भर्तृहरि ने कहा है कि - - **'भोगे, रोग - भयं' अर्थात् भोग भोगने से शरीर में रोग होने की सम्भावना है** । दुनिया में कोई भी वस्तु ऐसी नहीं है, जिससे हमको सदैव **'सुख'** मिला करे ।

षड् - दर्शन-समुच्चय में जीवराम नाम के एक मनुष्य की कथा है । जीवराम ने 'सुख' प्राप्त करने के लिए तपश्चर्या करके, भगवान् शिव जी से 'सुख' का वर माँगा । उससे भगवान् ने पूछा कि - **'तुम किस तरह का 'सुख' चाहते हो ?'** तब वह सुखी मनुष्यों की शोध करने लगा । राजा से लेकर उसने सब लोगों को देखा, पर कोई उसको पूर्ण सुखी नहीं दिखा । अन्त में उसने एक महाजन को देखा, जो उसे सब प्रकार से सुखी मालूम हुआ, परन्तु पूछने पर पता चला कि उसके जैसा कोई दुःखी नहीं है क्योंकि सुन्दर स्त्री होने पर भी, वह सांसारिक सुख प्राप्त नहीं कर सकता था । कहने का तात्पर्य यह है कि सांसारिक वस्तुओं में से, सब प्रकार के **'सुख'** सदैव नहीं मिलते ।

क्या
'राम-चरित-मानस'
तन्त्र है?

'शास्त्र'
और
'तन्त्र'
का
सुन्दर
परिचय

हिन्दू-धर्म
के
सिद्धान्तों
का
विस्तृत
वर्णन

'सत्यदर्शी' कवि तुलसीदास
विरचित
राम-चरित-मानस
की
अनूठी बाह्य-परीक्षा
एवं
सार-गर्भित अन्तरङ्ग-परीक्षा

सम्पादक, प्रकाशक एवं मुद्रक : श्रीऋतशील शर्मा, परावाणी प्रेस, प्रयाग-२११ ००६